चम्पा कुमारी सिंघी और अन्य

बनाम

सदस्य, राजस्व बोर्ड, पश्चिमी बंगाल और अन्य

(Champa Kumari Singhi and Others

Vs.

The Member, Board of Revenue, West Bengal and Others)

(2 फरवरी, 1970)

(मुख्य न्यायाधिपति एम० हिदायतुल्लाह, न्या० जे० सी० शाह, के० एस० हेगडे, ए० एन० ग्रोवर, ए० एन० रे और आई० डी० दुआ)

इण्डियन इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 (1922 का 11)—धारा 46—कर का किस्तों द्वारा संदाय अनुज्ञात किया जाना और किसी एक किस्त के संदाय में भी व्यतिक्रम होने पर सम्पूर्ण अतिशेष के वसूलीय हो जाने का करार किया जाना—निर्धारण आदेश में करार को निर्धारण आदेश के भाग के रूप में प्रयुक्त किया जाना—किस्तों के संदाय में व्यतिक्रम—वसूली कार्यवाहियों का व्यतिक्रम से एक वर्ष के पश्चात् किन्तु अन्तिम किस्त के देय होने से पूर्व प्रारम्भ किया जाना—ऐसा मामला धारा 46 की उपधारा (7) के परन्तुक के खण्ड (iv) के अन्तर्गत आएगा और वसूली कार्यवाहियां परिसीमा द्वारा वर्जित नहीं होंगी।

राजस्व विभाग तथा निर्धारितियों के बीच एक करार किया गया जिसमें निर्धारितियों का पिछले कई वर्षों के लिए आयकर दायित्व नियत किया गया तथा उसके संदाय के लिए किस्तें नियत कर दी गईं। करार में यह अनुबन्धित किया गया कि यदि एक भी किस्त के संदाय में व्यतिक्रम हुआ तो सम्पूर्ण रकम वसूलीय हो जाएगी। अन्तिम किस्त 31 मार्च, 1957 को संदेय थी। आयकर अधिकारी ने करार के अनुसार ही निर्धारण आदेश जारी किए। यह आदेश तथा 31 मार्च, 1953 तक किस्त की रकम संदत्त करने के लिए मांग की सूचनाएं निर्धारितियों को भेजी गई और उन्हें यह भी सूचित किया गया कि यदि प्रथम किस्त के संदाय में कोई व्यतिक्रम न हुआ तो अतिशेष के संदाय के लिए भी समय बढ़ा दिया जाएगा। निर्धारितियों ने इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 की धारा 23-क के अधीन निर्धारण आदेशों के विरुद्ध पुनरीक्षण फाइल किए। आयकर आयुक्त

ने यह अभिनिर्धारित किया कि निर्धारण उचित रूप से किए गए थे क्योंकि वे निर्धारिती द्वारा किए गए प्रकटन के पश्चात् किए गए समझौते के अनुसार ही थे। तत्पश्चात् किस्तों द्वारा संदाय करने के पूर्वतर करार में परिवर्तन किया गया जिसमें शास्ति की रकम घटा दी गई तथा कम रकम की किस्तें नियत की गईं। निर्धारिती 31 मार्च, 1953 को किस्त का संदाय करने में असफल रहे। अन्तिम किस्त का संदाय 31 मार्च, 1957 को देय था। मार्च, 1956 में अधिनियम की धारा 46 (2) के अधीन प्रमाणपत्र जारी किए गए और बंगाल पब्लिक डिमाण्ड्स रिक्वरी ऐक्ट, 1913 के अधीन सूचनाओं की तामील की गई। अपीलार्थियों ने यह दलील दी कि प्रमाणपत्र इण्डियन इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 की धारा 47 (1) के अधीन परिसीमा द्वारा वर्जित है। उनके अनुसार व्यतिक्रम की तारीख अर्थात् 31 मार्च, 1953 से एक वर्ष की अवधि के भीतर ही कार्यवाहियां की जा सकती थीं। उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेशों के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपीलें की गईं। अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित—यदि किसी मामले में कर का संदाय किस्तों में किया जाना अनुज्ञात कर दिया गया हो और करार में यह अनुबन्धित किया गया हो कि यदि एक भी किस्त के संदाय में व्यतिक्रम हुआ तो सम्पूर्ण रकम वसूलीय हो जाएगी तथा करार को निर्धारण आदेश के भाग के रूप में उद्धृत किया गया हो तो प्रथम किस्त के संदाय के व्यतिक्रम होने पर निर्धारिती व्यतिक्रमी बन जाएंगे। किस्तों के मंजूर किए जाने के कारण ऐसे मामले को इण्डियन इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 की धारा 46 (7) के परन्तुक का खण्ड (iv) लागू होगा। परन्तुक के खण्ड (iv) में सम्पूर्ण रकम के वसूलीय होने अथवा किसी विशिष्ट किस्त के वसूलीय होने के बारे में कोई उल्लेख नहीं किया गया है। उसमें केवल इतना ही कथित किया गया है कि यदि किस्तें मंजूर कर ली जाएं तो वित्तीय वर्ष के अन्त के साथ समाप्त होने वाली एक वर्ष की अवधि का परिकलन उस तारीख से किया जाएगा जिस पर अन्तिम किस्त संदेय हो। यद्यपि परन्तुक के खण्ड (iv) की भाषा इस आशय को उचित रूप से अभिव्यक्त नहीं करती तो भी यह आशय सदैव ही स्पष्ट था। सरकार किसी किस्त को, भले ही वह देर से संदत्त की गई हो, मांग की तारीख से एक वर्ष की परिसीमा अवधि के बारे में चिन्ता किए बिना स्वीकार कर सकती है क्योंकि धारा 46 (7) के परन्तुक का खण्ड (iv) सरकार को अन्तिम किस्त के संदेय होने तक प्रतीक्षा करने का विकल्प प्रदान करता है। किस्तों की स्कीम के कारण मामला धारा 46 की उपधारा (7) के मुख्य भाग से बाहर हो जाएगा और वह परन्तुक के खण्ड (iv) के अन्तर्गत आएगा। अतः यदि किसी मामले में किसी किस्त के संदाय में

व्यतिक्रम किया गया हो और सरकार द्वारा व्यतिक्रम से एक वर्ष से अधिक की अवधि के पश्चात् किन्तु अन्तिम किस्त के देय होने के पूर्व वसूली के लिए कार्यवाहियां की गई हों तो ऐसी कार्यवाहियां परिसीमा द्वारा वर्जित नहीं होंगी। (पैरा 16)

सिविल अपीली अधिकारिता : 1968 की सिविल अपील संख्या 564 से 571.

1958 के मूल आदेश संख्या 139 से 142 के विरुद्ध की गई अपीलों में कलकत्ता उच्च न्यायालय के तारीख 10 दिसम्बर, 1963 और 24 नवम्बर, 1964 वाले निर्णयों और आदेशों के विरुद्ध विशेष इजाज़त लेकर की गई अपीलें।

अपीलार्थियों की ओर से (सभी अपीलों में)	सर्वश्री एम० सी० छागला, पी० एन० तिवारी, जे० बी० दादाचांजी, ओ० सी० माथुर और रवीन्द्र नारायण
प्रत्यर्थियों की ओर से (सभी अपीलों में)	श्री जगदीश स्वरूप, भारत के महासालिसिटर, सर्वश्री आर० गोपालकृष्णन और आर० एन० सचदे

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायाधिपति एम० हिदायतुल्लाह ने दिया।

मुख्य न्यायाधिपति हिदायतुल्लाह—

इस निर्णय से 1968 की सिविल अपील संख्या 564 से 571 तक का निपटारा हो जाएगा। इन अपीलों में से चार अपीलें कलकत्ता उच्च न्यायालय के तारीख 10 दिसम्बर, 1963 वाले उस सामान्य निर्णय और आदेश के विरुद्ध की गई हैं जिसके द्वारा 1958 के रिट पिटीशन संख्या 159 से 162 तक में विद्वान् एकल न्यायाधीश के तारीख 23 अप्रैल, 1956 वाले आदेश के विरुद्ध की गई चार अपीलें (1959 की 139 से 142 तक) खारिज की गई थीं। शेष चार अपीलें 24 नवम्बर, 1964 वाले उस आदेश के विरुद्ध की गई हैं, जिसके द्वारा मामले को संविधान के अनुच्छेद 133 (1) के अधीन इस न्यायालय में अपील के लायक प्रमाणित करने से इन्कार किया गया था।

2. तथ्य इस प्रकार हैं। दालचन्द सिंधी के पास भूतपूर्व कोरी राज्य (जो कि अब मध्य प्रदेश में है) में पूर्वेक्षण अनुज्ञप्ति थी। उसके पुत्र बहादुर सिंह सिंधी ने एक खनन पट्टा लिया था तथा झारखण्ड कोलरी के नाम से एक कोयलाखान प्रारम्भ की। सन् 1942 में झारखण्ड कोलरी लिमिटेड के नाम से ज्ञात एक प्राइवेट लिमिटेड कम्पनी प्रारंभ की गई जिसकी

प्राधिकृत पूंजी 24 लाख रुपये थी (हज़ार-हज़ार रुपये के 2,400 शेयर)। बहादुर सिंह ने 2,400 शेयरों को स्वयं तथा अपने तीन पुत्रों राजेन्द्र सिंह सिंघी, नरेन्द्र सिंह सिंघी और बीरेन्द्र सिंह सिंघी के बीच बराबर-बराबर बांट लिया। सन्, 1943 में कोयलाखान का कारबार तथा उसकी आस्तियां अविभक्त कुटुम्ब द्वारा कम्पनी को अन्तरित कर दी गई। सन् 1944 में पिता तथा उसके तीन पुत्र पृथक् हो गए तथा सम्पत्ति का विभाजन कर लिया। बहादुर सिंह सिंघी की 7 जुलाई, 1944 को मृत्यु हो गई और उसने अपने पीछे एक विल छोड़ी। विल के साथ संलग्न प्रशासन पत्र, 1945 में मंजूर कर लिए गए। झारखण्ड कोलरी लिमिटेड के रजिस्टर में संशोधन किया गया और उसके पश्चात् उसमें नरेन्द्र सिंह सिंघी तथा राजेन्द्र सिंह सिंघी के नाम में 900 शेयर तथा बीरेन्द्र सिंह सिंघी के नाम में 6,600 शेयर दर्शित किए गए। बीरेन्द्र सिंह सिंघी की 12 नवम्बर, 1950 को मृत्यु हो गई तथा उसने अपने पीछे अपनी विधवा श्रीमती चम्पा कुमारी और दो अवयस्क पुत्र अशोक कुमार सिंघी, चन्द्र कुमार सिंघी तथा एक अवयस्क पुत्री को भी छोड़ा। ये अवयस्क अब वयस्क हो गए हैं।

3. 19 मई, 1951 को घोषित 'त्यागी स्कीम' के अधीन झारखण्ड कोलरी लिमिटेड तथा उसके अंशधारियों द्वारा स्वैच्छिक प्रकटन किया गया था। ऐसे प्रकटन के लिए कालावधि 31 अगस्त, 1951 तक थी। इसके पूर्व आयकर अधिकारी ने कुछ अपराधों के लिए कम्पनी के विरुद्ध एक परिवाद फाइल किया था तथा तलाशी वारन्ट के अधीन 1945 से 1950 तक की कम्पनी की लेखा-पुस्तकें अभिगृहीत कर ली थीं। यह घटना 3 जुलाई, 1951 को हुई थी। तब अंशधारियों तथा कम्पनी ने 31 जुलाई, 1951 को वर्ष 1945 से 1948 के दौरान 42, 52, 501 रुपये की छिपाई हुई आमदनी प्रकट की।

4. 28 नवम्बर, 1952 को आयकर आयुक्त ने उस दशा में अभियोजन वापस लेने की प्रस्थापना की जब कि कम्पनी तथा अंशधारी 90,00,000 रुपये की कुल आय पर, जिसे कि उसने वर्ष 1945 से 1950 तक (दोनों को सम्मिलित करते हुए) की आय माना, देय करों को, बीस प्रतिशत शास्ति तथा असंदत्त कर पर तीन प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ब्याज सहित संदत्त करने का करार करें। कतिपय अन्य शर्तें भी थीं जिन पर विचार करने की हमें आवश्यकता नहीं है। कुछ अभ्यावेदन किए गए और अन्त में 26 दिसम्बर, 1951 को यह करार किया गया कि पक्षकार संयुक्त रूप से और पृथक् रूप से 67,48,841 रुपये 11 आने संदत्त करेंगे। यह भी करार किया गया कि 55,99,832 रुपये 11 आने, पक्षकारों

द्वारा इस रकम के निम्नलिखित किस्तों में संदत्त किए जाने पर पूर्ण भुगतान के रूप में स्वीकार किए जाएंगे—

(क)	31 दिसम्बर, 1951 तक	...	7,50,000 रुपये
(ख)	31 मार्च, 1952 तक	...	5,00,000 रुपये
(ग)	31 मार्च, 1953 तक	...	9,50,000 रुपये
(घ)	31 मार्च, 1954 तक	...	9,50,000 रुपये
(ङ)	31 मार्च, 1955 तक	...	9,50,000 रुपये
(च)	31 मार्च, 1956 तक	...	9,50,000 रुपये
(छ)	31 मार्च 1957 तक		अतिशेष

किस्तों में से किसी एक का भी संदाय करने में असफल रहने पर 67,41,341 रुपये 11 आने की सम्पूर्ण राशि ब्याज सहित देय हो जाएगी। करार का विलेख, गारंटी तथा साम्य-बन्धक, दिखाए गए थे जिनमें प्रत्येक अंशधारी की कुल आय और कुल शुद्ध कर-दायित्व दर्शित किया गया था, जो कि इस प्रकार था—

1947/48 से 1951/52 तक

	कुल कर
श्रीमती चम्पा कुमारी के पति	5,28,817 रुपये 11 आने
राजेन्द्र सिंह सिंधी	9,30,498 रुपये 03 आने
नरेन्द्र सिंह सिंधी	9,93,816 रुपये 15 आने
झारखण्ड कोलरीज़ लिमिटेड	43,99,712 रुपये 11 आने

कम्पनी ने कर के तौर पर निम्नलिखित राशियां संदत्त कीं—

1 फरवरी, 1952	3,50,000 रुपये
1 अप्रैल, 1952	90,000 रुपये
22 अप्रैल, 1952	1,22,000 रुपये

नरेन्द्र सिंह सिंधी ने कर के तौर पर निम्नलिखित राशियां संदत्त कीं—

1 फरवरी, 1952	1,50,000 रुपये
1 अप्रैल, 1952	60,000 रुपये
22 अप्रैल, 1952	48,000 रुपये

श्रीमती चम्पा कुमारी ने कर के तौर पर निम्नलिखित राशियां संदत्त कीं—

1 अप्रैल, 1952	1,00,000 रुपये
1 अप्रैल, 1952	40,000 रुपये
22 अप्रैल, 1952	32,000 रुपये

राजेन्द्र सिंह सिंधी ने कर के तौर पर निम्नलिखित राशियां संदत्त कीं—

1 अप्रैल, 1952	1,50,000 रुपये
1 अप्रैल, 1952	60,000 रुपये
22 अप्रैल, 1952	48,000 रुपये

22 अप्रैल, 1952 को उन्होंने एक करार पर हस्ताक्षर किए। उस तारीख तक किस्तों के संदाय की स्थिति उपरोक्त मद (ग) तक पहुंची थी जिसमें 9,50,000 रुपये 31 मार्च, 1953 को देय के रूप में दर्शित किए गए हैं।

5. 29 अगस्त, 1952 को आयकर अधिकारी ने निर्धारण वर्ष 1947-48 से 1951-52 तक की बाबत विभिन्न निर्धारण आदेश दिए। ऐसे प्रत्येक आदेश में निम्नलिखित सम्मिलित था—

> "भारत सरकार द्वारा घोषित प्रकटनों के निपटारे के लिए रियायती स्कीम के अधीन निर्धारिती तथा अन्य व्यक्तियों द्वारा फाइल किए गए तारीख 18 जुलाई, 1951 वाले पिटीशनों के सम्बन्ध में निष्पादित तारीख 22 अप्रैल, 1952 वाले करार के निबन्धनों के अनुसार निम्नलिखित रूप से निर्धारण किया जाता है—"

और उसके पश्चात् कुल आय की संगणना, कर की संगणना तथा कुल मांग की गई रकम दर्शित की गई थी।

6. 22 सितम्बर, 1952 को आयकर अधिकारी (कम्पनी ज़िला), कलकत्ता ने प्रत्येक निर्धारिती को निम्नलिखित पत्र भेजा। यहां पर उदाहरण के लिए केवल श्रीमती चम्पा कुमारी सिंधी को भेजा गया पत्र उद्धृत किया जा सकता है—

1970(2) eILR(PAT) SC 37

"प्रेषिती :

श्री वी० सत्यामूर्ति, एम० ए०, बी० एल,
आयकर अधिकारी, कम्पनी जिला-1,
कलकत्ता

सेवा में

श्रीमती चम्पा कुमारी सिंघी
49, गरिष्ट रोड, कलकत्ता

महोदया,

मैं आज पृथक् डाक द्वारा (रसीदी रजिस्ट्री डाक द्वारा) रियायती स्कीम के अधीन आपके द्वारा फाइल किए गए प्रकटन पिटीशन के निपटारे के सम्बन्ध में आपके तथा सरकार के बीच किए गए तारीख 22 अप्रैल, 1952 वाले करार के निबन्धनों के अनुसार आपके द्वारा संदेय करों की और शास्तियों की रकम की बाबत निर्धारण आदेशों, शास्ति आदेशों, मांग सूचनाओं और चालानों आदि की प्रतियां भेज रहा हूं।

मांग सूचनाओं और चालानों में मांगों को 31 मार्च, 1953 को अथवा उससे पूर्व संदेय दर्शित किया गया है जब कि इस करार के अधीन आगामी किस्त का संदाय देय होता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि यदि उस किस्त के संदाय के मामले में (अर्थात् 31 मार्च, 1953 तक 9,50,000 रुपये, उन पर देय पूरे ब्याज सहित) कोई व्यतिक्रम नहीं होता है तो मैं अतिशेष के संदाय के लिए समय को और बढ़ाने की मंजूरी दे दूंगा।

भवदीय,

हस्ताक्षर: दुर्वाच्य

तारीख 22-9-1952 आयकर अधिकारी"

इस पत्र के साथ इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 की धारा 29 के अधीन निर्धारण आदेश तथा मांग की सूचनाएं भेजी गई थीं। मांग की ये सूचनाएं विभिन्न अपीलार्थियों के पास 24 सितम्बर, 1952 को पहुंचीं। अतिलाभ कर तथा कारबार लाभ कर के लिए भी ऐसी ही सूचनाओं की तामील की गई थी जिनमें निर्धारितियों से देय रकमों को 31 मार्च, 1953 को या उससे पूर्व संदत्त करने की अपेक्षा की गई।

7. 25 मार्च, 1953 को अपीलार्थियों ने इन्कम टैक्स ऐक्ट की धारा 33-क के अधीन निर्धारण आदेशों तथा इन्कम टैक्स ऐक्ट की धारा 23-क के लागू किए जाने के विरुद्ध पुनरीक्षण के लिए आवेदन फाइल किए। आयुक्त ने यह

अभिनिर्धारित किया कि निर्धारण उचित हैं क्योंकि वे अपीलार्थियों द्वारा प्रकटन किए जाने के पश्चात् समझौते के अनुसार किए गए हैं। इसके पश्चात् अपीलार्थियों ने यह निवेदन किया कि 31 मार्च, 1953 को संदेय 9,50,000 रु० की बजाय एक लाख रुपया स्वीकार किया जाए और उन्हें व्यतिक्रमी न माना जाए। उस रकम को चालू वित्तीय वर्ष के लिए चालू दायित्व के प्रति विनियोजित कर लिया गया।

8. फरवरी, 1954 में आयुक्त ने अपीलार्थियों की सुनवाई के पश्चात् 22 अप्रैल, 1952 के करार में परिवर्तन के लिए राजस्व बोर्ड को निदेश करने का वचन दिया। मुख्य परिवर्तन यह किया जाना था कि शास्ति घटा कर आधी कर दी जाएगी और अपीलार्थियों को 31 मार्च, 1954 को 5,60, 000 रु० संदत्त करने होंगे और छह वर्ष तक प्रतिवर्ष इतनी ही किस्त देनी होगी। तारीख 27 दिसम्बर, 1954 को करार पुनरीक्षित किया गया। कम्पनी ने 31 मार्च, 1954 को 5,60,000 रुपये का एक चैक भेजा जो कि उक्त संदाय के प्रति था, किन्तु उसे 1947-48 के लिए कम्पनी से की गई मांग के प्रति विनियोजित कर लिया गया।

9. 14 मार्च, 1956 को इण्डियन इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 की धारा 46(2) के अधीन प्रमाणपत्र जारी किए गए थे और अपीलार्थियों पर मई, 1956 में बंगाल पब्लिक डिमाण्ड्स रिकवरी ऐक्ट, 1913 की धारा 7 के अधीन सूचनाओं की तामील की गई थी। जून, 1956 में अपीलार्थियों ने रिकवरी ऐक्ट की धारा 9 के अधीन विभिन्न पिटीशन फाइल किए जिनमें अन्य बातों के साथ यह दलील दी गई कि कार्यवाहियां परिसीमा द्वारा वर्जित हैं। 5 जनवरी, 1957 को इस आक्षेप का खण्डन कर दिया गया।

10. अपीलार्थियों ने रिकवरी ऐक्ट की धारा 51 के अधीन आयुक्त को अपील की और यह आक्षेप स्वीकार कर लिया गया कि प्रमाणपत्र इन्डियन इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 की धारा 46(7) के अधीन परिसीमा द्वारा वर्जित हैं तथा प्रमाणपत्र रद्द कर दिए गए। तदुपरि भारत संघ ने पब्लिक डिमाण्ड्स रिकवरी ऐक्ट की धारा 53 के अधीन आयुक्त के आदेशों के विरुद्ध राजस्व बोर्ड के समक्ष विभिन्न पुनरीक्षण फाइल किए। उन्हें 27 जून, 1958 वाले एक सामान्य आदेश द्वारा मंजूर कर लिया गया। अपीलार्थी से पुनः करस्थम् वारण्टों के आधार पर रकम का संदाय करने की अपेक्षा की गई।

11. उस विवाद की पृष्ठभूमि को समझने के लिए, जिससे संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन ये पिटीशन उत्पन्न हुए है, उपरोक्त तथ्यों को समझना

आवश्यक था। अपीलार्थियों ने 1958 के रिट पिटीशन संख्या 159 से 162 तक राजस्व वोर्ड के आदेशों को अभिखण्डित करने तथा प्रमाणपत्र अधिकारी को वसूली प्रमाणपत्रों को प्रवृत्त करने से प्रतिपिद्ध करने के लिए उत्प्रेषण की रिट के लिए आवेदन करते हुए फाइल किए। रिट पिटीशनों की सुनवाई न्यायाधिपति सिन्हा द्वारा की गई और, उन्हें 23 अप्रैल, 1959 को खारिज कर दिया गया। वसूली कार्यवाहियों के बारे में यह अभिनिर्धारित किया गया कि वे परिसीमा द्वारा वर्जित नहीं हैं। तव अपीलार्थियों ने न्यायाधिपति सिन्हा के निर्णय और आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपीलें फाइल कीं (1959 की 139 से 142 तक)। इन अपीलों की सुनवाई न्यायाधिपति मुखर्जी और सेन द्वारा की गई जिन्होंने उस सामान्य निर्णय द्वारा, जिसके विरुद्ध हमारे समक्ष इन चार अपीलों में अब अपील की गई है, उन्हें खारिज कर दिया। संविधान के अनुच्छेद 133(1) के अधीन प्रमाणपत्र के लिए आवेदन भी नामंजूर कर दिए गए जिसके कारण हमारे समक्ष की अन्य चार अपीलें उत्पन्न हुई हैं।

12. श्री छागला ने, जिन्होंने इन अपीलों की पैरवी की, सर्वप्रथम परिसीमा का प्रश्न पेश किया और तव गुणागुण, जैसे कि करारों के निर्वचन और उच्च न्यायालय द्वारा उनके अवलम्बन तथा 31 मार्च, 1954 को संदत्त रकमों के अनुपातत: वितरण के बारे में तर्क करने का प्रयास किया। हमने इन प्रश्नों को उठाने की अनुज्ञा नहीं दी है। ये प्रश्न न्यायाधिपति सिन्हा के समक्ष नहीं उठाए गए थे। खण्ड न्यायपीठ ने भी इन प्रश्नों को उठाए जाने की अनुज्ञा नहीं दी थी।

13. अत: संक्षिप्त प्रश्न इस मामले को लागू होने वाली परिसीमा के सम्बन्ध में है। इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हमारा सम्बन्ध इण्डियन इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 की धारा 46 से है। हमें सम्पूर्ण धारा पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है अपितु केवल उपधारा (1) और (7) पर ही विचार करेंगे जो कि सुसंगत हैं। वे इस प्रकार हैं—

"46. **वसूली का ढंग और समय**—

(1) जब कोई निर्धारिती आयकर का संदाय करने में व्यतिक्रम करे तब आयकर अधिकारी स्वविवेकानुसार यह निदेश दे सकेगा कि बकाया

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"46. *Mode and time of recovery*—

(1) When an assessee is in default in making a payment of income-tax, the Income-tax Officer may in his discretion

की रकम के अलावा, उस रकम से अनधिक राशि निर्धारिती से शास्ति के तौर पर वसूल की जाएगी।

× × × ×

(7) धारा 42 की उपधारा (1) अथवा धारा 45 के परन्तुक के उपबन्धों के अनुसार के सिवाय, इस अधिनियम के अधीन संदेय किसी राशि की वसूली के लिए कोई कार्यवाही उस वित्तीय वर्ष के अन्तिम दिन से, जिसमें इस नियम के अधीन कोई मांग की गई हो, एक वर्ष की समाप्ति के पश्चात् प्रारम्भ नहीं की जाएगी :

परन्तु इसमें निर्दिष्ट एक वर्ष की अवधि,

× × × ×

(iv) जहां पर संदेय राशि का किस्तों द्वारा संदाय अनुज्ञात कर दिया गया हो वहां उस तारीख से (संगणित की जाएगी) जिसको ऐसी किस्तों में से अन्तिम किस्त देय थी :

परन्तु यह और कि पूर्वगामी परन्तुक की किसी बात का प्रभाव उस अवधि को जिसके भीतर वसूली के लिए कार्यवाहियां प्रारम्भ की

---

direct that in addittion to the amount of the arrears, a sum not exceeding that amount shall be recovered from the assessee by way of penalty."

× × × ×

(7) Save in accordance with the provisions of sub-section (1) of section 42, or to the proviso to section 45, no proceedings for the recovery of any sum payable under this Act shall be commenced after the expiration of one year from the last day of the financial year in which any demand is made under this Act :

Provided that the period of one year herein referred to shall—

× × × ×

(iv) where the sum payable is allowed to be paid by instalments, from the date on which the last of such instalments was due :

Provided further that nothing in the foregoing proviso shall have the effect of reducing the period within which

जा सकती हैं अर्थात् उस वित्तीय वर्ष के जिसमें मांग की गई हो अन्तिम दिन से एक वर्ष की अवधि, को कम करने का नहीं होगा।

स्पष्टीकरण : किसी राशि की वसूली के लिए किसी कार्यवाही के बारे में यह समझा जाएगा कि वह इस धारा के अर्थ में प्रारम्भ की गई है यदि सम्पूर्ण राशि अथवा उसके किसी भाग को इसमें इसके पूर्व विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर वसूल करने के लिए कोई कार्यवाही प्रारम्भ की गई हो और सन्देहों के निराकरण के लिए एतद्द्वारा यह घोषित किया जाता है कि इस धारा में विनिर्दिष्ट वसूली के विभिन्न ढंग न तो पारस्परिक रूप से अनन्य हैं और न ही किसी भी तरह से सरकार को देय ऋणों की वसूली से सम्बन्धित तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि को प्रभावित करते हैं तथा आयकर अधिकारी के लिए, यदि किन्हीं विशेष कारणों से, जो कि अभिलिखित किए जाएंगे, वह ऐसा करना उचित समझता है तो, इस बात के होते हुए भी कि देय कर किसी निर्धारिती से किसी अन्य ढंग से वसूल किया जा रहा है, इस धारा में निर्दिष्ट किसी ढंग का आश्रय लेना विधिपूर्ण होगा।"

अपीलार्थियों की दलील यह है कि हमें यह ज्ञात करना है कि उन्हें प्रथम उपधारा के अर्थ में कब व्यतिक्रमी माना जा सकता है और क्या उपधारा (7) के मुख्य भाग के अधीन शास्ति सहित कर की वसूली के लिए कार्यवाहियां उस वित्तीय

---

proceedings for recovery can be commenced, namely, after the expiration of one year from the last day of the financial year in which the demand is made.

Explanation.—A proceeding for the recovery of any sum shall be deemed to have commenced within the meaning of this section, if some action is taken to recover the whole or any part of the sum within the period hereinbefore referred to, and for the removal of doubts it is hereby declared that the several modes of recovery specified in this section are neither mutually exclusive, nor affect in any way any other law for the time being in force relating to the recovery of debts due to Government, and it shall be lawful for the Income-tax Officer, if for any special reasons to be recorded, he so thinks fit, to have recourse to any such mode of recovery notwithstanding that the tax due is being recovered from an assessee by any other mode."

वर्ष के जिसमें मांग की गई थी अन्तिम दिन से एक वर्ष की समाप्ति के पश्चात् प्रारम्भ की जा सकती हैं। विभाग ने यह तर्क दिया है कि मामला प्रथम परन्तुक के खण्ड (iv) के अन्तर्गत आता है जो कि एक वर्ष की परिसीमा का परिकलन उसी तारीख से अनुज्ञात करता है जिसको प्रस्तुत मामले में अन्तिम किस्त देय थी।

14. प्रारम्भ में हम यह कथित कर दें कि प्रथम परन्तुक के, चतुर्थ खण्ड में यह गलती है कि उस खण्ड में "संगणित की जाएगी" शब्दों को अनवधानतापूर्वक छोड़ दिया गया है। इन शब्दों को प्रयुक्त करने का आशय उस ढंग से स्पष्ट है जिससे कि प्रथम तीन खण्डों की भाषा प्रयुक्त की गई है। यदि हम ये शब्द जोड़ दें जिन्हें कि अनावधानतापूर्वक छोड़ दिया गया है तो यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रस्तुत मामले में दो परिसीमाओं में से मामले की परिस्थितियों के अनुसार एक परिसीमा लागू होती है। यदि उस पर उपधारा (7) के मुख्य खण्ड के अधीन विचार किया जाए तो हमें यह ज्ञात करना है कि क्या किसी ऐसी विशिष्ट तारीख तक सम्पूर्ण रकम संदेय थी जिस पर कि निर्धारिती के बारे में यह कहा जा सकता है कि वह व्यतिक्रमी बन गया है। तथापि, यदि परन्तुक का चतुर्थ खण्ड लागू होता है तो हमें यह देखना है कि क्या किस्तों की मंजूरी के कारण परिसीमा केवल उसी तारीख से चलनी प्रारम्भ होगी जिस पर अन्तिम किस्त संदेय थी। इस सम्बन्ध में उच्च न्यायालय द्वारा तथा राजस्व बोर्ड द्वारा करारों और निर्धारण आदेश तथा मांग की सूचनाएं भेजते समय लिखे गए पत्रों के प्रति निर्देश किया गया है। करारों में किस्तों द्वारा संदाय की एक युक्ति उपवर्णित की गई है और सम्पूर्ण संदेय राशि 67,48,841/11/-रुपये थी। यह राशि 1952 से 31 मार्च, 1957 तक विभिन्न किस्तों में संदेय थी। तथापि उसमें इस प्रकार उपबन्धित किया गया था—

> "............परन्तु सभी किस्तों के सम्यक् तथा नियमित संदाय की दशा में सरकार अन्तिम किस्त में से 11,49,99/5/- रुपये की राशि, उस पर ब्याज सहित छोड़ देगी और 55,99,822/6/- रुपये की राशि, उस पर ब्याज सहित देय अतिशेष के पूर्ण भुगतान के रूप में स्वीकार कर लेगी, परन्तु यह और कि सम्यक् तारीख को किसी राशि के संदाय में कोई व्यतिक्रम होने की दशा में अथवा यह पाए जाने की दशा में कि एतद्द्वारा दी गई गारण्टी अथवा उसका कोई भाग किसी भी कारणवश प्रवर्तनीय नहीं है, कोई उपशमन नहीं किया जाएगा तथा प्रथम और द्वितीय भाग के पक्षकार 67,98,841/11/- रुपये की पूर्ण राशि का संदाय करेंगे।

31 मार्च, 1953, 31 मार्च, 1954, 31 मार्च, 1955, 31 मार्च, 1956 तथा 31 मार्च, 1957 को संदेय धन राशियां अनुपातत: अनुसूची 'म' में उल्लिखित प्रथम भाग तथा द्वितीय भाग के पक्षकारों के कर-दायित्व के प्रति उपयोजित की जाएंगी।

तथापि उक्त पक्षकार उक्त किस्तों के प्रति, एक समय पर 10,000 रुपये (दसहज़ार रुपये) से अनधिक की राशि का किसी भी समय आंशिक संदाय करने के लिए स्वतन्त्र होंगे।

4. किसी किस्त के ऊपर उल्लिखित समय के भीतर संदाय न किए जाने की दशा में (ऐसे समय को ठहराव के सार के रूप में समझा गया है) अथवा यह पाए जाने की दशा में कि एतद्द्वारा दी गई गारण्टी अथवा उसका कोई भाग किसी भी कारण से प्रवर्तनीय नहीं रहा है, 67,48,841 रुपये 11 आने की उक्त राशि का सम्पूर्ण अतिशेष तुरन्त देय और पूर्वोक्त दर पर ब्याज सहित संदेय हो जाएगा तथा सरकार (इस दस्तावेज के प्रवर्तन के लिए सभी अधिकारों के अतिरिक्त) संदाय प्रवृत्त कराने के लिए सभी कदम जिनके अन्तर्गत इन्कम टैक्स ऐक्ट की धारा 46(2) के अधीन प्रमाण पत्रों का जारी किया जाना तथा वैस्ट बंगाल पब्लिक डिमाण्ड्स रिक्वरी ऐक्ट और रेवेन्यू रिक्वरी ऐक्ट के अधीन कार्यवाहियां भी हैं, उठाने की हकदार होगी।"

15. अपीलार्थियों की ओर से दी गई दलील यह है कि 22 सितम्बर, 1952 वाले पत्र के साथ (जिनमें से एक दृष्टान्त के तौर पर ऊपर उद्धृत किया गया है) मांग की सूचनाएं भी थीं और 31 मार्च, 1953 को 9,50,000 रुपये की किस्त के संदाय में उल्लंघन होने पर अपीलार्थी अधिनियम के अर्थ में कर की सम्पूर्ण रकम की बाबत व्यतिक्रमी बन गए। अत: वसूली कार्यवहियां 31 मार्च, 1953 को प्रारम्भ होने वाले वित्तीय वर्ष के अन्त से पूर्व ही प्रारम्भ की जा सकती थीं क्योंकि किस्तों का संदाय वित्तीय वर्ष की समाप्ति के साथ समसामयिक था। उनके अनुसार इस बात का उपबन्ध करार के उस उद्धरण में किया गया था जो कि करार में से ऊपर उद्धृत किया गया है। दूसरे पक्ष ने यह दलील दी कि धारा 46 की उपधारा (7) के प्रथम परन्तुक का खण्ड (iv) किस्तों द्वारा संदाय की युक्ति के अधीन सम्पूर्ण रकम के वसूलीय होने पर कोई ध्यान नहीं देता। जब भी किस्तें मंजूर कर ली जाएं तब परिसीमा अवधि अन्तिम किस्त से गिनी जाती है और इस मामले में वह 31 मार्च, 1957 से एक वर्ष की अवधि होगी। व्यतिक्रम को इससे पहले भी देखा जा सकता है क्योंकि सम्पूर्ण रकम उस समय

वसूलीय रहती है जब कि प्रथम व्यतिक्रम किया गया हो। प्रस्तुत मामले में प्रमाणपत्र 14 मार्च, 1956 को जारी किया गया था और इसलिए वह परिसीमा अवधि के भीतर ही था।

16. इस मामले में विद्वान् एकल न्यायाधीश (न्यायाधिपति सिन्हा) ने अति उचित रूप से यह कहा है कि करार के अधीन दो बातें की गई थीं। प्रथमतः पक्षकारों का कुल दायित्व परिकलित किया गया था और प्रत्येक पक्षकार संयुक्त रूप से तथा पृथक् रूप से सम्पूर्ण राशि के लिए ज़िम्मेदार बन गया। तब किस्तें नियत की गईं और एक भी किस्त के संदाय में उल्लंघन होने पर सम्पूर्ण रकम वसूलीय बन गई। निर्धारण आदेश में करार को उसके भाग के रूप में उद्धृत किया गया था और इसलिए करार निर्धारण आदेश बन गया। निर्धारण आदेश के अधीन प्रथम किस्त की 9,50,000 रुपये की राशि 31 मार्च, 1953 तक संदत्त करने के लिए मांग की सूचना भेजी गई थी। उसमें उल्लंघन होने पर यह कहा गया कि सम्पूर्ण रकम वसूलीय है और उसके बारे में भी मांग की गई। न्यायाधीश ने यह निष्कर्ष ठीक ही निकाला है कि इसलिए अपीलार्थी प्रथम किस्त का संदाय करने में असफल रहने पर व्यतिक्रमी बन गया। चूंकि किस्तें मंजूर की गई थीं इसलिए धारा 46 की उपधारा (7) के परन्तुक का खण्ड (iv) इस मामले को लागू होता था। यह निष्कर्ष ठीक है। उस खण्ड में सम्पूर्ण रकम के वसूलीय होने अथवा किसी विशिष्ट किस्त के वसूलीय होने के बारे में कोई उल्लेख नहीं किया गया है। उसमें केवल इतना ही कथित किया गया है कि यदि किस्तें मंजूर कर ली जाएं तो वित्तीय वर्ष के अन्त के साथ समाप्त होने वाले एक वर्ष की अवधि का परिकलन उस तारीख से किया जाना है जिस पर अन्तिम किस्त संदेय हो। परन्तुक के खण्ड (iv) की भाषा इस आशय को उचित रूप से अभिव्यक्त नहीं करती थी और अब नए अधिनियम में उसमें शुद्धि कर दी गई है, किन्तु यह आशय सदैव ही स्पष्ट था। द्वितीय करार में भी, जो कि प्रथम करार के स्थान पर किया गया, यही शर्त थी। शास्ति के मामले में रियायत दर्शित की गई थी और कम रकम की किस्तें नियत की गई थीं। किन्तु तब भी केन्द्रीय राजस्व बोर्ड ने यह नियत किया था कि उपरोक्त उल्लिखित रियायत केवल उसी दशा में उपलभ्य होगी जबकि संदाय की पुनरीक्षित स्कीम का कड़ाई से अनुसरण किया जाए। दूसरे शब्दों में संदाय किस्तों में किया जाना था और इसलिए इस रियायत को खण्ड (iv) के उपबन्ध लागू होते थे। सरकार किसी किस्त को, भले ही वह देर से संदत्त की गई हो, मांग की तारीख से एक वर्ष की परिसीमा अवधि के बारे में चिन्ता किए बिना स्वीकार कर सकती थी क्योंकि प्रथम परन्तुक के खण्ड (iv) द्वारा

उसे अन्तिम किस्त के संदेय होने तक प्रतीक्षा करने का विकल्प दे दिया गया था। किस्तों की स्कीम के कारण मामला उपधारा (7) के मुख्य भाग से बाहर हो गया और वह परन्तुक के खण्ड (iv) के अन्तर्गत आ गया। अतः हमारा यह समाधान हो गया है कि उच्च न्यायालय का यह अभिनिर्धारित करना ठीक था कि प्रमाणपत्र विधि द्वारा विहित परिसीमा के भीतर ही जारी किए गए थे और वे समय द्वारा वर्जित नहीं थे। अतः प्रथम चार अपीलें असफल होती हैं और खर्चों सहित खारिज की जाती हैं। अन्य अपीलों पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि विशेष इजाज़त मुख्य आदेश के विरुद्ध ही दी गई थी और वे अपीलें स्वयं ही असफल हो गई हैं। प्रमाणपत्र प्रदान करने से इन्कार करने वाले आदेश के विरुद्ध की गई शेष चार अपीलें तदनुसार निरर्थक के रूप में खारिज की जाती हैं और खर्चे की बावत कोई पृथक् आदेश नहीं दिया जाता है।

न्यायाधिपति हेगडे—

17. इन अपीलों को मंजूर किया जाना चाहिए क्योंकि मेरे विचार में आक्षेपकृत प्रमाणपत्र इण्डियन इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 (संक्षेप में अधिनियम) की धारा 46 की उपधारा (1) के अधीन वर्जित है।

18. इस मामले के तथ्य माननीय मुख्य न्यायाधिपति के निर्णय में पूर्ण रूप से उपवर्णित कर दिए गए हैं अतः उन्हें पुनःकथित करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

19. निर्धारितियों तथा विभाग के बीच किए गए करार के अधीन यदि निर्धारिती नियत किस्तों में से एक या अधिक का संदाय करने में असफल रहते हैं तो सम्पूर्ण कर तुरन्त वसूलीय हो जाएगा। स्वीकृत रूप से निर्धारिती करार में यथा अनुबंधित रूप से किस्तों का संदाय करने में असफल रहे और इसलिए विभाग को कर की सम्पूर्ण बकाया वसूल करने का अधिकार था। यह सत्य है कि करार में व्यतिक्रम से सम्बन्धित खण्ड विभाग के फायदे के लिए आशयित था और इसलिए संविदा विधि के अधीन विभाग को उस खण्ड का अधित्यजन करने तथा विभिन्न किस्तों की, जैसे और जब वे देय हो जाएं, वसूली के लिए वाद लाने का अधिकार था। किन्तु धारा 46 की उपधारा (7) के सही विस्तार पर विचार करने के लिए प्रश्न का वह पहलू संसुगत नहीं है। धारा 46 में कर की बकाया की वसूली के लिए एक विशेष तंत्र सृजित किया गया है। धारा 46 अधिनियम के अध्याय 4 के अन्तर्गत है जो कि कर तथा शास्तियों

की वसूली से सम्बन्धित है। धारा 45 में यह विहित किया गया है कि कब कोई निर्धारिती व्यतिक्रमी बन जाएगा। उस धारा का मुख्य भाग इस प्रकार है—

*"धारा 23-क की उपधारा (3) के अधीन अथवा धारा 29 के अधीन किसी मांग की सूचना अथवा धारा 31 के अधीन अथवा धारा 33 के अधीन किसी आदेश में संदेय के रूप में विनिर्दिष्ट कोई रकम उस समय के भीतर, उस स्थान पर तथा उस व्यक्ति को जिनका उस सूचना या आदेश में उल्लेख किया जाए, संदत्त की जाएगी अथवा यदि इस प्रकार कोई समय उल्लिखित न किया गया हो तो सूचना अथवा आदेश की तामील की तारीख के ठीक दूसरे मास के प्रथम दिन को अथवा उससे पूर्व संदत्त की जाएगी और इस प्रकार संदत्त करने में असफल रहने वाले किसी निर्धारिती को व्यतिक्रमी समझा जाएगा, परन्तु यह कि जब किसी निर्धारिती ने धारा 30 के अधीन कोई अपील की हो तब आयकर अधिकारी स्वविवेकानुसार निर्धारिती को, जब तक कि उस अपील का निपटारा नहीं हो जाता, व्यतिक्रमी नहीं मान सकता है।"

(उस धारा का परन्तुक और स्पष्टीकरण हमारे इस प्रयोजन के लिए सुसंगत नहीं है)।

20. इसे ज्ञात करने के लिए कि क्या कोई निर्धारिती व्यतिक्रमी है या नहीं हमें केवल इतना ही देखना होता है कि क्या वह धारा 45 के उपबन्धों का अनुपालन करने में असफल रहा है। यदि वह धारा 45 के उपबन्धों के अनुसार

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"Any amount specified as payble in a notice of demand under sub-section (3) of section 23A or under section 29 or an order under section 31 or section 33, shall be paid within the time, at the place and to the person mentioned in the notice or order, or if a time is not so mentioned, then on or before the first day of the second month following the date of service of the notice or order, and any assessee failing so to pay shall be deemed to be in default, provided that, when an assessee has presented an appeal under section 30, the Income-tax Officer may, in his discretion treat the assessee as not being in default as long such appeal is undisposed of."

1970(2) eILR(PAT) SC 37

की गई मांग का उसमें उल्लिखित समय के भीतर पालन करने में असफल रहा है तो वह 'अधिनियम' के अर्थ में व्यतिक्रमी है। जब तक कोई निर्धारिती व्यतिक्रमी न हो तब तक उसके विरुद्ध धारा 46 के अधीन कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती। किसी करार के निबन्धनों का पालन न किया जाना धारा 45 के अधीन व्यतिक्रम की कोटि में नहीं आता। अतः प्रथम बात हमें यह देखनी है कि निर्धारिती कब व्यतिक्रमी बन गए। उस प्रश्न के विनिश्चय के लिए करार के प्रति निर्देश विसंगत है। स्वीकृत रूप से धारा 29 के अधीन मांग की सूचनाएं निर्धारितियों को उनसे देय सम्पूर्ण रकम की बाबत 22 सितम्बर, 1952 को जारी की गई। अतः जैसे ही निर्धारिती उन मांगों का अनुपालन करने में असफल रहे, वे व्यतिक्रमी बन गए। अब हम धारा 46 पर विचार करेंगे। धारा 46 की उपधारा (1) इस प्रकार है—

> "जब कोई निर्धारिती आयकर का संदाय करने में व्यतिक्रम करे तब आयकर अधिकारी स्वविवेकानुसार यह निदेश दे सकेगा कि बकाया की रकम के अलावा, उस रकम से अनधिक राशि निर्धारिती से शास्ति के तौर पर वसूल की जाएगी।"

21. इस उपधारा में निर्दिष्ट व्यतिक्रम आवश्यक रूप से धारा 45 के अधीन व्यतिक्रम है। यह बात अध्याय 4 की युक्ति से स्पष्ट है। अब हम धारा 46 की उपधारा (7) देखेंगे जो कि इस प्रकार है—

> "धारा 42 की उपधारा (1) अथवा धारा 45 के परन्तुक के उपबन्धों के अनुसार के सिवाय, इस अधिनियम के अधीन संदेय किसी राशि की वसूली के लिए कोई कार्यवाही उस वित्तीय वर्ष के अन्तिम दिन से, जिसमें इस नियम के अधीन कोई मांग की गई हो, एक वर्ष की समाप्ति के पश्चात् प्रारम्भ नहीं की जाएगी :
>
> परन्तु इसमें निर्दिष्ट एक वर्ष की अवधि,
>
> × × × ×
>
> (iv) जहां पर संदेय राशि का किस्तों द्वारा संदाय अनुज्ञात कर दिया गया हो वहां उस तारीख से (संगणित की जाएगी) जिसको ऐसी किस्तों में से अन्तिम किस्त देय थी।"

22. यदि हम धारा 46 की आक्षेपकृत उपधारा (7) देखें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि अधिनियम के अधीन संदेय किसी राशि की वसूली के लिए कार्यवाहियां उस वित्तीय वर्ष के जिसमें अधिनियम के अधीन मांग की गई हो

अन्तिम दिन से एक वर्ष के अवसान के पश्चात् प्रारम्भ नहीं की जा सकती हैं। प्रस्तुत मामले में प्रश्नगत मांगे 22 सितम्बर, 1952 को की गई थीं। अतः वसूली कार्यवाहियां 31 मार्च, 1953 के पूर्व प्रारम्भ की जानी चाहिएं थीं किन्तु वस्तुतः वे 14 अप्रैल, 1956 को प्रारम्भ की गईं। अतः वे प्रथमदृष्टया वर्जित हैं।

23. अब हम धारा 46 की उपधारा (7) के परन्तुक के खण्ड (iv) पर विचार करेंगे। उस परन्तुक के अधीन, जहां कि संदेय राशि किस्तों द्वारा संदत्त करने की अनुज्ञा दे दी गई हो वहां धारा 46 की उपधारा (7) में विहित एक वर्ष की संगणना उस तारीख से की जाएगी जिसको ऐसी किस्तों में से अन्तिम किस्त देय हो। 'देय थी' (वाज़ ड्यू) पद व्याकरणिक दृष्टि से शुद्ध प्रतीत नहीं होता है। इसे 'देय है' (इज़ ड्यू) होना चाहिए था। यह शुद्धि 1961 के आयकर अधिनियम के तत्समानी उपबन्ध में कर दी गई है। किन्तु हमारे प्रस्तुत प्रयोजन के लिए यह भूल महत्त्वहीन है। उस अधिनियम के अधीन भी 'देय थी' से 'देय है' ही अभिप्रेत हो सकता है। यह ज्ञात करने के लिए कि दावाकृत राशि कब देय थी हमें पुनः धारा 45 पर विचार करना होगा। सितम्बर, 1952 में जारी की गई मांग सूचनाओं को दृष्टि में रखते हुए राशि उस समय देय हो गई जब कि निर्धारिती व्यतिक्रमी बने और इसलिए अधिनियम के अधीन वसूली कार्यवाहियां मार्च, 1954 के पूर्व प्रारम्भ की जानी चाहिए थीं। ये कार्यवाहियां उस तारीख के पूर्व प्रारम्भ नहीं की गईं इसलिए प्रश्नगत कार्यवाही के बारे में यह अभिनिर्धारित करना होगा कि वह वर्जित है। मेरे विचार में उस तारीख को ज्ञात करने के लिए जिसको अन्तिम किस्त देय थी, हम निर्धारिती तथा राजस्व विभाग के बीच किए गए करार का आश्रय नहीं ले सकते। अधिनियम के अध्याय 6 का निर्धारितियों तथा राजस्व विभाग के बीच किए गए करार से कोई सम्बन्ध नहीं है। धारा 46(7) में 'देय थी' पद उस कर के प्रति निर्देश करता है जो कि धारा 45 और 46 के उपबन्धों के अनुसार देय हो। ऊपर उल्लिखित कारणों से मैं इन अपीलों को मंजूर करता हूँ।

आदेश

बहुमत की राय के अनुसार 1966 की सिविल अपील संख्या 564-566, 568 और 570 (जो कि कलकत्ता उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ के तारीख 10 दिसम्बर, 1963 वाले निर्णय और आदेश से उत्पन्न हुई थीं) खर्चों सहित खारिज की जाती हैं। अन्य अपीलें भी निरर्थक के रूप में खारिज की जाती हैं और खर्चों के बारे में कोई पृथक् आदेश नहीं दिया जाता है।

अपीलें खारिज की गईं।

ज०

गंगाराम और अन्य

बनाम

भारत संघ और अन्य

(Ganga Ram and Others

Vs.

Union of India and Others)

(2 फरवरी, 1970)

(मु० न्या० एम० हिदायतुल्लाह, न्या० जे० सी० शाह, के० एस० हेगडे, ए० एन० ग्रोवर, ए० एन० रे और आई० डी० दुआ)

इण्डियन रेलवेज एस्टैब्लिशमेंट मैनुअल—अध्याय II का पैरा 20(बी)—वर्गीकरण का सिद्धांत—लिपिकों को सीधी भर्ती वाले व्यक्तियों और प्रोन्नत व्यक्तियों के रूप में वर्गीकृत किया जाना—ग्रेड I में सीधी भर्ती किए गए लिपिकों को ग्रेड I में के उन लिपिकों से ज्येष्ठ माना जाना जो कि ग्रेड II से प्रोन्नत किए गए थे—असमानता का उत्पन्न होना मात्र सांविधानिक अवरोध के लिए पर्याप्त नहीं होता, क्योंकि प्रत्येक वर्गीकरण के परिणामस्वरूप, कुछ सीमा तक असमानता का विद्यमान होना संभाव्य है—वर्गीकरण को ऐसे बोधगम्य भेदक चिन्हों पर आधारित होना चाहिए जो कि एक समूह में रखे गए व्यक्तियों का उन व्यक्तियों से युक्तियुक्त आधारों पर प्रभेद करते हैं जिन्हें उस समूह के बाहर कर दिया गया है—ऐसी स्थिति में संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का अतिक्रमण नहीं होता।

पिटीशनर उत्तरी रेलवे के उपमुख्य लेखा अधिकारी (यातायात लेखा शाखा) के कार्यालय में स्थानापन्न लिपिक ग्रेड I थे। विभागीय अर्हक परीक्षा पास करने के बाद उन्हें ग्रेड II में प्रोन्नत किया गयाथा। उनका दावा यह है कि उनकी ज्येष्ठता स्थानापन्न लिपिक ग्रेड I के रूप में उनकी नियुक्ति की तारीख से, न कि लिपिक ग्रेड II की श्रेणीकरण सूची में बताए गए उनके स्थान के आधार पर, अवधारित की जानी चाहिए। उनकी शिकायत यह है कि उन्हें प्रत्यर्थी सं० 4 से लेकर 6 तक और 11 के परीक्षा पास करने के बहुत पहले ही विभागीय परीक्षा पास करने के बाद, स्थानापन्न लिपिक ग्रेड I के रूप में नियुक्त किया गया था किन्तु इन चारों प्रत्यर्थियों को ग्रेड II में उनकी ज्येष्ठता के आधार पर पिटीशनरों से ज्येष्ठ

बताया गया है। पिटीशनरों ने अपने दावे के समर्थन में संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का आश्रय लिया है। पिटीशनरों की शिकायत यह है कि ग्रेड I में सीधी भर्ती किए गए व्यक्तियों की ज्येष्ठता उनकी नियुक्ति के आधार पर अवधारित की जाती है, जब कि उन पिटीशनरों की ज्येष्ठता जो ग्रेड I में स्थानापन्न रूप से कार्य करने के लिए ग्रेड II से प्रोन्नत किए गए हैं, ग्रेड II में उनकी ज्येष्ठता के आधार पर अवधारित की जाती है। इस बात पर जोर दिया गया कि सीधी भर्ती वाले व्यक्ति और प्रोन्नत किए गए व्यक्ति दोनों को ही, पिटीशनरों की भांति, विभागीय अर्हक परीक्षा पास करते हैं, तुरन्त प्रोन्नत नहीं किए जाते हैं। उन्हें उस समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है जब तक कि कोई स्थान रिक्त नहीं हो जाता है और रिक्ति के भरे जाने के समय भी ज्येष्ठतम अर्हित लिपिक का चयन, उन लोगों को जो कि निश्चित समय के पहले अर्हित हो जाते हैं, कोई अधिमानता दिए बिना, प्रोन्नति के लिए किया जाता है। पुनः जब कि कोई स्थायी पद रिक्त होता है, तो ग्रेड II में के सभी पात्र-लिपिक, उन लोगों को जिन्होंने लिपिक ग्रेड I के रूप में पहले ही स्थानापन्न रूप से कार्य किया है, कोई फायदा या अधिमानता दिए बिना, समान माना जाता है। पिटीशनरों की शिकायत के अनुसार ऐसा कोई कनिष्ठ लिपिक ग्रेड II जो कि पहले ही अर्हित हो गया है, ग्रेड I में के स्थायी पद में प्रोन्नति और पुष्टि के प्रयोजन के लिए कनिष्ठ बना रहता है और ऐसा ग्रेड II ज्येष्ठ लिपिक जो कि बाद में अर्हित होता है, इस प्रयोजन के लिए अपनी ज्येष्ठता बनाए रखता है। उसी प्रकार से छुट्टी के कारण होने वाली रिक्तियों को भरने में, यह शिकायत की गई है कि यदि कोई लिपिक अल्पावधि वाली छुट्टी के परिणामस्वरूप हुई रिक्ति में स्थानापन्न रूप से कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है, तो उस पदधारी के वापस आने पर वह इस प्रकार से स्थानापन्न रूप में कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है, तो उस पदधारी के वापस आने पर वह इस प्रकार से स्थानापन्न रूप में कार्य करने के लिए नियुक्त लिपिक प्रतिवर्तित होने के स्थान पर, श्रेणीकरण सूची के अनुसार ग्रेड II का ऐसा कनिष्ठतम व्यक्ति जो कि ग्रेड I में स्थानापन्न रूप में कार्य करता रहता है, प्रतिवर्तित कर दिया जाता है, भले ही वह पूर्वकथित व्यक्ति की बनिस्बत उसके पहले ही अर्हित क्यों न हुआ हो और उसने ग्रेड I में नियमित पद में कुछ समय तक स्थानापन्न रूप से कार्य क्यों न किया हो। यह कहा गया है कि विधि के समक्ष समानता और लोक नियोजन के मामले में अवसर की समानता सम्बन्धी पिटीशनरों के अधिकार का अतिक्रमण हुआ है। अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित—इसमें कोई संदेह नहीं है कि सेवाओं के मामले में अवसर की समानता की परिधि के भीतर प्रारम्भिक नियुक्ति से लेकर उसका पर्यवसान

होने तक प्रोन्नति सहित सेवा के सभी प्रक्रम आ जाते हैं, किन्तु वह चयन और प्रोन्नति के लिए युक्तियुक्त नियम विहित करने की बात को प्रतिषिद्ध नहीं करता जो कि वर्गीकृत समूह के सभी सदस्यों को लागू हों। असमानता का उत्पन्न होना मात्र सांविधानिक अवरोध के लिए पर्याप्त नहीं है, क्योंकि प्रत्येक वर्गीकरण के परिणामस्वरूप, कुछ सीमा तक, कुछ असमानता का उत्पन्न होना संभाव्य है। राज्य उचित रूप से इस बात के लिए सशक्त है कि वह सेवाओं में दक्षता का अपेक्षित मानक सुनिश्चित करने के लिए वर्गीकरण का नियम बनाए और यह आवश्यक नहीं है कि ऐसा वर्गीकरण वैज्ञानिक दृष्टि से पूर्ण हो या युक्तियुक्त रूप से पूरा हो। (पैरा 3)

असमानता की बुराई की परिधि से बाहर होने के लिए वर्गीकरण ऐसे बोधगम्य भेदक चिन्हों पर आधारित होना चाहिए जो कि ऐसे व्यक्तियों का जो साथ-साथ एक समूह में रखे गए हैं, उन व्यक्तियों से युक्तियुक्त आधारों पर प्रभेद करता है जिनको उस समूह से बाहर कर दिया गया है। (पैरा 5)

ऐसे अन्तर जो कि वर्गीकरण को उचित ठहराते हैं, वास्तविक तथा सारवान होने चाहिएं और उनका संबंध उस उद्देश्य से जो प्राप्त करना ईप्सित हो, न्यायोचित और युक्तियुक्त होना चाहिए। यदि ऐसा वर्गीकरण इस कसौटी पर खरा उतरता है, तो उस पर असमानता की बुराई का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ सकता। (पैरा 6)

यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि पैरा 49 ग्रेड II के ऐसे लिपिकों को जो कि परिशिष्ट 2 वाली परीक्षा पास करते हैं, तुरन्त प्रोन्नत किए जाने का कोई अधिकार प्रदत्त नहीं करता। उनका जो एक मात्र अधिकार प्रतीत होता है, वह यह है कि उनके रास्ते से एक कठिनाई दूर हो जाती है और वे इस बात के पात्र हो जाते हैं कि उनके मामले पर ग्रेड I में प्रोन्नत किए जाने के लिए विचार किया जाए। यह प्रोन्नति ज्येष्ठता तथा उपयुक्तता की कसौटी पर कसी जाती है। ऐसे सभी व्यक्ति जो कि प्रोन्नति के लिए अर्हित होते हैं, इस प्रयोजन के लिए समान माने जाते हैं और उन्हें साथ-साथ एक समूह में इस प्रकार रखा जाता है, मानो कि वे एक वर्ग गठित करते हों। इस तथ्य के कारण कि कोई व्यक्ति निश्चित समय से पहले अर्हित हो गया है, उसे उन व्यक्तियों के मुकाबले जो कि बाद में अर्हित होते हैं, प्रोन्नति का अधिमान्य अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता। यह परीक्षा अविच्छिन्न परीक्षा समझी जाती है और जैसा कि पैरा 17 से स्पष्ट है, इस परीक्षा में मिली सफलता ज्येष्ठता का आधार नहीं होती है जो कि ग्रेड II में की अधिष्ठायी या आधारिक ज्येष्ठता पर निर्भर बनी रहता है। अवधारण के लिए जो प्रश्न प्रत्यक्ष रूप से उत्पन्न होता है, वह यह है कि "क्या इन अनुदेशों में

अधिकथित प्रक्रिया के परिणामस्वरूप अनुच्छेद 14 और 16 द्वारा यथाप्रत्याभूत पिटीशनरों के अधिकारों का अतिक्रमण हुआ है। राज्य जिसे ऐसी भिन्न-भिन्न समस्याओं का सामना करना होता है जो कि विभिन्न परिस्थितियों से उत्पन्न होती हैं, अपने भिन्न-भिन्न विभागों में प्रोन्नति का पात्र होने के लिए सबसे अच्छी सेवा सुनिश्चित करने की दृष्टि से दक्षता की शर्तें और अन्य शर्तें अधिकथित करने का हकदार होता हैं। वर्तमान मामले में इसके पहले उद्धृत उपबंधों द्वारा जो उद्देश्य प्राप्त करना ईप्सित है, वह रेल स्थापन के लेखा विभाग में अपेक्षित दक्षता है। विभागीय प्राधिकारी अपनी आवश्यकताओं का उचित निर्णायक होता है। (पैरा 7)

सीधी भर्ती किए गए व्यक्ति और प्रोन्नति द्वारा भर्ती किए गए व्यक्ति, जैसे कि पिटीशनर हैं, स्पष्ट रूप से भिन्न-भिन्न वर्ग गठित करते हैं और यह पृथक्करण ऐसे बोधगम्य प्रभेदक चिन्ह के आधार पर कायम किया जा सकता है जिसका कि दक्षता के उस उद्देश्य से युक्तियुक्त संबंध है, जो प्राप्त करना ईप्सित है। ग्रेड I में जो प्रोन्नति की जाती है, वह ज्येष्ठता तथा योग्यता को ध्यान में रखकर निश्चित की जाती है। अत: जो उपबंध ग्रेड II वाले ऐसे सभी लिपिकों को जो कि परिशिष्ट 2 वाली परीक्षा पास करके अर्हित हो जाते हैं, एक ही समूह में रखता है उसमें गलती निकालना कठिन है। इस तथ्य के कारण भी कि ग्रेड II में से प्रोन्नत किए गए ऐसे व्यक्तियों को जिन्होंने उस समय तक स्थानापन्न रूप में कार्य किया है, इस कालावधि का लाभ उस समय नहीं दिया जाता, जब कि स्थायी रिक्ति होती है। उसके परिणामस्वरूप कोई भी प्रतिकूल विभेद उत्पन्न नहीं होता है और वह न तो मनमाना है और न ही अयुक्तियुक्त। वह ग्रेड II के ऐसे लिपिकों के सभी सदस्यों को समान रूप से लागू होता है, जो कि अर्हित हो गए हैं और उसके पात्र हैं। इस मामले में विभेद साबित करने का भार पिटीशनरों पर है और उन्हें यह दर्शित करना चाहिए कि वर्गीकरण न्यायोचित और युक्तियुक्त आधार पर नहीं किया गया है। पिटीशनरों की ओर से जिस अन्तर पर जोर दिया गया है, वह गम्भीर दलील का आधार बनाने के लिए अतिसूक्ष्म हैं। अत: उनकी चुनौती असफल हो गई है। (पैरा 8)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1963]	(1963) 3 एस० सी० आर० 600 : **मरविन काउंटिन्डो बनाम सीमा शुल्क कलक्टर मुम्बई** (Mervyn Coutindo *Vs.* Collector of Customs, Bombay) :	9

आरम्भिक अधिकारिता : 1967 का रिट पिटीशन संख्या 124.

मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन पिटीशन।

पिटीशनर की ओर से	सर्वश्री एस० के० मेहता और के० एल० मेहता
प्रत्यर्थी संख्या 1 से लेकर 3 तक की ओर से	सर्वश्री एन० एस० बिन्द्रा और एस० पी० नायर
प्रत्यर्थी संख्या 4 से 10 तक की ओर से	श्री हरबंस सिंह

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति आई० डी० दुआ ने दिया।

न्यायाधिपति दुआ—

चूंकि संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन प्रस्तुत इस पिटीशन में 5 पिटीशनरों में से पिटीशनर संख्या 5 अभी तक सेवा निवृत्त हो चुका है इसलिए वह इन कार्यवाहियों के परिणाम में हितबद्ध नहीं रह गया हैं। इस प्रकार से केवल चार पिटीशनरों का दावा ही विचार किए जाने के लिए रह गया है। [वे उत्तरी रेलवे के उपमुख्य लेखा अधिकारी (यातायात लेखा शाखा) के कार्यालय में स्थानापन्न लिपिक ग्रेड I हैं। विभागीय अर्हक परीक्षा पास करने के बाद जिसे परिशिष्ट 2 वाली परीक्षा के रूप में वर्णित किया गया है, उन्हें ग्रेड II में प्रोन्नत किया गया था। उनका दावा यह है कि उनकी ज्येष्ठता स्थानापन्न लिपिक ग्रेड I के रूप में उनकी नियुक्ति की तारीख से, न कि लिपिक ग्रेड II की श्रेणीकरण सूची में बताए गए उनके स्थान के आधार पर, अवधारित की जानी चाहिए। उनकी शिकायत यह है कि उन्हें प्रत्यर्थी संख्या 4 से लेकर 6 तक और II के परीक्षा पास करने के बहुत पहले ही, परिशिष्ट 2 वाली परीक्षा पास करने के बाद, स्थानापन्न लिपिक ग्रेड I के रूप में नियुक्त किया गया था किन्तु इन चारों प्रत्यर्थियों को ग्रेड II में उनकी ज्येष्ठता के आधार पर पिटीशनरों से ज्येष्ठ बताया गया है। पिटीशनरों ने अपने दावे के समर्थन में संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का आश्रय लिया है। पिटीशनरों की शिकायत यह है कि ग्रेड I में सीधी भर्ती किए गए व्यक्तियों की ज्येष्ठता उनकी नियुक्ति के आधार पर अवधारित की जाती है, जब कि उन पिटीशनरों की ज्येष्ठता जो ग्रेड I में स्थानापन्न रूप से कार्य करने के लिए ग्रेड II से प्रोन्नत किए गए हैं, ग्रेड II में उनकी ज्येष्ठता के आधार पर अवधारित की जाती है। इस बात पर जोर दिया

गया है कि सीधी भर्ती वाले व्यक्ति और प्रोन्नत किए गए व्यक्ति दोनों को ही, पिटीशनरों की भांति, परिशिष्ट 2 वाली परीक्षा पास करनी पड़ती है। इसके अलावा इस बात की भी शिकायत की गई है कि ऐसे ग्रेड II वाले लिपिक जो कि परिशिष्ट 2 वाली अर्हक परीक्षा पास करते हैं, तुरन्त प्रोन्नत नहीं किए जाते हैं। उन्हें उस समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है जब तक कि कोई स्थान रिक्त नहीं हो जाता है और रिक्ति के भरे जाने के समय भी ज्येष्ठता अर्हित लिपिक का चयन, उन लोगों को जो कि निश्चित समय के पहले अर्हित हो जाते हैं, कोई अधिमानता दिए बिना, प्रोन्नति के लिए किया जाता है। पुनः, जब कि कोई स्थायी पद रिक्त होता है, तो ग्रेड II में के उन सभी पात्र-लिपिक, उन लोगों को जिन्होंने लिपिक, ग्रेड I के रूप में पहले ही स्थानापन्न रूप में कार्य किया है, कोई फायदा या अधिमानता दिए बिना, समान माना जाता है। पिटीशनरों की शिकायत के अनुसार ऐसा कोई कनिष्ठ लिपिक, ग्रेड II जो कि पहले ही अर्हित हो गया है, ग्रेड I में के स्थायी पद में प्रोन्नति और पुष्टि के प्रयोजन के लिए कनिष्ठ बना रहता है और ऐसा ग्रेड II ज्येष्ठ लिपिक जो कि बाद में अर्हित होता है, इस प्रयोजन के लिए अपनी ज्येष्ठता बनाए रखता है। उसी प्रकार से छुट्टी के कारण होने वाली रिक्तियों को भरने में, यह शिकायत की गई है कि यदि कोई लिपिक अल्पावधि वाली छुट्टी के परिणामस्वरूप हुई रिक्ति में स्थानापन्न रूप से कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है, तो उस पदधारी के वापस आने पर वह इस प्रकार से स्थानापन्न रूप में कार्य करने के लिए नियुक्त लिपिक प्रतिवर्तित होने के स्थानपर, श्रेणीकरण सूची के अनुसार, ग्रेड II का ऐसा कनिष्ठतम व्यक्ति जो कि ग्रेड I में स्थानापन्न रूप में कार्य करता रहता है, प्रतिवर्तित कर दिया जाता है, भले ही वह पूर्वकथित व्यक्ति की बनिस्बत उसके पहले ही अर्हित क्यों न हुआ हो और उसने ग्रेड I में नियमित पद में कुछ समय तक स्थानापन्न रूप से कार्य क्यों न किया हो। यह कहा गया है कि विधि के समक्ष समानता और लोक नियोजन के मामले में अवसर की समानता सम्बन्धी पिटीशनरों के अधिकार का अतिक्रमण हुआ है।

2. हमारे संविधान के अनुच्छेद 14 से लेकर 16 के अधीन समानता के अधिकार की गारण्टी दी गई है। पिटीशनरों ने अनुच्छेद 14 और 16 (1) का आश्रय लिया है। अनुच्छेद 14 के अधीन राज्य के विधायी और कार्यपालक दोनों ही अंगों तथा अन्य प्राधिकारियों के लिए यह व्यादिष्ट किया गया है कि वे किसी भी व्यक्ति को विधि के समक्ष समानता और विधियों का समान संरक्षण देने से इन्कार न करे। अनुच्छेद 16 समानता के उस साधारण नियम का उदाहरण मात्र है जो अनुच्छेद 14 में अधिकथित किया गया है।

अनुच्छेद 16 के उप अनुच्छेद (1) में प्रत्येक नागरिक को लोक नियोजन के मामले में अवसर की समानता की गारण्टी दी गई है जिसके द्वारा अनुच्छेद 14 के अधीन प्रत्याभूत विधि के समक्ष समानता का प्रभाव उत्पन्न करने के उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है।

3. इसमें कोई संदेह नहीं है कि सेवाओं के मामले में अवसर की समानता परिधि के भीतर प्रारम्भिक नियुक्ति से लेकर उसका पर्यवसान होने तक, प्रोन्नति सहित, सेवा के सभी प्रक्रम आ जाते हैं, किन्तु वह चयन और प्रोन्नति के लिए युक्तियुक्त नियम विहित करने की बात को प्रतिषिद्ध नहीं करता जो कि वर्गीकृत समूह के सभी सदस्यों को लागू हों। असमानता का उत्पन्न होना मात्र सांविधानिक अवरोध के लिए पर्याप्त नहीं है, क्योंकि प्रत्येक वर्गीकरण के परिणामस्वरूप, कुछ सीमा तक, कुछ असमानता का उत्पन्न होना संभाव्य है। राज्य उचित रूप से इस बात के लिए सशक्त है कि वह सेवाओं में दक्षता का अपेक्षित मानक सुनिश्चित करने के लिए वर्गीकरण का नियम बनाए और यह आवश्यक नहीं है कि ऐसा वर्गीकरण वैज्ञानिक दृष्टि से पूर्ण हो या युक्तियुक्त रूप से पूरा हो।

4. अनुच्छेद 14 और 16 की व्यापक भाषा को निश्चित मामलों को लागू करने में सैद्धान्तिक दृष्टिकोण अपनाने से बचना चाहिए और उस मामले पर समानता विषयक खण्डों को काटे-छांटे बिना ही व्यावहारिक रूप से विचार करना चाहिए।

5. किन्तु असमानता की बुराई की परिधि से बाहर होने के लिए वर्गीकरण ऐसे बोधगम्य भेदक चिह्नों पर आधारित होना चाहिए जो कि ऐसे व्यक्तियों का जो साथ-साथ एक समूह में रखे गए हैं, व्यक्तियों से युक्तियुक्त आधारों पर प्रभेद करता है जिनको उस समूह से बाहर कर दिया गया हैं।

6. ऐसे अन्तर जो कि वर्गीकरण को उचित ठहराते हैं, वास्तविक तथा सारवान होने चाहिए और उनका सम्बन्ध उस उद्देश्य से जो प्राप्त करना ईप्सित हो, न्यायोचित और युक्तियुक्त होना चाहिए। यदि ऐसे वर्गीकरण इस कसौटी पर खरा उतरता है, तो उस पर असमानता की बुराई का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ सकता। इन विस्तृत सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में ही पिटीशनरों की शिकायत पर ही विचार किया जाना चाहिए।

7. इण्डियन रेलवे एस्टैब्लिशमेंट मैन्युअल (भारतीय रेल स्थापन मैन्यूअल) में ऐसे सुसंगत उपबन्ध जो कि पिटीशनरों के मामलों को सीधे ही लागू होते हैं, विचार किया जा सकता है। वे खण्ड बी के अध्याय I के पैरा 48 और 49 तथा

अध्याय 2 के पैरा 16 और 20 (ख) में अन्तर्विष्ट हैं। चूंकि पिटीशनरों ने अपनी इस दलील के समर्थन में कि पैरा 20 (ख) विभेदकारी है, अध्याय 2 के पैरा 17 से लेकर 19 तक का और 21 का आश्रय लिया है, इसलिए इन सभी पैराओं को उद्धृत करना वांछनीय है।

*"48. इस समूह में सम्मिलित वर्ग और उनकी प्रोन्नति के प्रसामान्य मार्ग निम्नलिखित रूप में है—

लिपिक ग्रेड II (110-180)

लिपिक ग्रेड I (130-300)

- उप-प्रधान (लिपिक) (210-380 रुपये)
  - कनिष्ठ लेखापाल (270-435 रु०)
    - ज्येष्ठ लेखापाल (435-575 रु०)
  - कनिष्ठ स्टेशन लेखा निरीक्षक (270-435 रु०)
    - ज्येष्ठ स्टेशन लेखा निरीक्षक (435-575 रु०)
  - कनिष्ठ स्टोर लेखा-निरीक्षक (270-435 रु०)
    - ज्येष्ठ स्टोर लेखा निरीक्षक (435-575 रु०)
- स्टाक-सत्यापनकर्ता (210-380 रुपये)

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"48. The classes included in this group and the normal channel of their promotion are as under :

Clerks, Grade II (110-180)

Clerks Grade I (Rs. 130-300)

- Sub-Heads (Rs. 210-380)
  - Junior Accountants (Rs. 270-435)
  - Jr. Inspector of Station Ac/s (Rs. 270-435)
  - Sr. Inspector of Store Accounts (Rs. 270-435)
- Stock Verifiers (Rs. 210-310)

भर्ती—प्रारम्भ में लिपिक ग्रेड II के ग्रेड में भर्ती लिपिक; ग्रेड I के ग्रेड 20 प्रतिशत रिक्तियों पर सीधी भर्ती।

अर्हताएं—

(क) आयु—(i) लिपिक ग्रेड II के लिए 18-21.

(ii) लिपिक ग्रेड I के लिए 18-25.

(ख) शिक्षा - लिपिक ग्रेड II के लिए मैट्रिक्यूलेशन; यह अर्हता उस समय तक रहेगी जब तक कि उसके स्थान पर उच्चतर माध्यमिक परीक्षा न प्रारम्भ हो जाए। लिपिक ग्रेड I के लिए विश्वविद्यालय की डिग्री होनी चाहिए, किन्तु ऐसे व्यक्तियों को अधिमानता दी जाएगी जिनके पास प्रथम और द्वितीय श्रेणी में (आनर्स) और मास्टर डिग्री हो।

सीधी भर्ती किए गए लिपिक, ग्रेड I एक वर्ष के लिए परिवीक्षाधीन होंगे और परिशिष्ट 2 में विहित विभागीय परीक्षा पास करने के बाद ही पुष्ट किए जाने के पात्र होंगे। नियमों और प्रक्रिया का कामचलाऊ ज्ञान प्राप्त करने के लिए उनको आवश्यक सुविधाएं दी जाएंगी।

Sr. Accountants	Sr. Inspectors of Station Ac/s	Sr. Inspectors Stores Ac/s
(Rs. 435-575)	(Rs. 435-575)	(Rs. 435-575)

Recruitment :—Initially in the grade of Clerks, Grade II Direct recruitment for 20% vacancies in the grade of Clerks, Grade I.

Qualifications :—

(*a*) *Age* (i) For clerks, Grade II 18-21.

(ii) For clerks, Grade I 18-25.

(*b*) *Education*—For clerks, Grade II, Matriculation till replaced by Higher Secondary. For clerks, Grade I, University Degree, preference being given to persons with I and II Division honours and Master's Degree.

Directly recruited Clerks, Grade I, will be on probation for one year and will be eligible for confirmation only after passing the prescribed departmental examination in Appendix 2. Necessary facilities will be given to them to enable them to acquire a wroking knowledge of the rules and procedure.

49. लिपिक ग्रेड II के ऐसे व्यक्ति जो कि परिशिष्ट 2 में यथाविहित विभागीय परीक्षा में अर्हित होते हैं, या वे जिन्हें उक्त परीक्षा पास करने से स्थायी रूप से छूट दे दी गई है, लिपिक ग्रेड I और उपप्रधान (लिपिक) के रूप में प्रोन्नत किए जाने के पात्र होंगे। वे 150 रु० प्रति मास का न्यूनतम वेतन प्राप्त करने के पात्र होंगे या साधारण नियमों के अधीन उनका वेतन नियत किए जाने के बाद, ग्रेड I में प्रोन्नत होने पर, उन्हें चार अग्रिम वेतन वृद्धियां अनुदत्त की जाएंगी। उपप्रधान (लिपिक) के पद पर जो प्रोन्नति की जाएगी, वह ज्येष्ठता तथा उपयुक्तता के आधार पर की जाएगी।"

अध्याय II

"17. पैरा 18 और 19 में नीचे जो कुछ भी बताया गया है, उसके अध्यधीन रहते हुए जहां कि विभागीय परीक्षा या ट्रेड-टेस्ट का पास करना किसी विशिष्ट गैर-चयन पद पर प्रोन्नति के लिए पूर्ववर्ती शर्त के रूप में विहित किया गया हो, वहां ऐसे रेल सेवकों की जो कि अपनी सम्यक् बारी में तथा यथास्थिति उसी तारीख को या भिन्न-भिन्न ऐसी तारीखों को जिन्हें एक अविच्छिन्न परीक्षा माना जाता है, परीक्षा/टेस्ट पास करते हैं, सापेक्ष

---

49. Such of the Clerks, Grade II, as qualify in the departmental examination as prescribed in Appendix 2 or those who may have been permanently exempted from passing the said examination will be eligible for promotion as Clerks Grade I, and sub-heads. They will be eligible for a minimum starting pay Rs. 150 per month or will be granted four advance increments on promotion to Grade I after their pay has been fixed under the ordinary rules. Promotion to the grade of Sub-Heads will be by seniority-cum-suitability."

CHAPTER II

"17. Subject to what is stated in paragraphs 18 and 19 below, where the passing of a departmental examination or trade test has been prescribed as a condition precedent to the promotion to a particular non-selection post, the relative seniority of the railway servants passing the examination/test in their due turn and on the same date or different dates which are trated as one continuous examination, as the case

ज्येष्ठता उनकी अधिष्ठायी या आधारिक ज्येष्ठता के संदर्भ में अवधारित की जाएगी।

18. ऐसे रेल सेवक को जो कि ऐसे कारणों से जो उसके नियंत्रण से परे हो, अन्य व्यक्तियों के साथ अपनी बारी में परीक्षा/टेस्ट में बैठने में असमर्थ है, उसी समय परीक्षा/टेस्ट में बैठना होगा जैसे ही वह उपलभ्य हो और यदि वह ऐसी परीक्षा/टेस्ट पास कर लेता है, तो वह उस पद पर प्रोन्नत किए जाने का ऐसे हकदार होगा मानो कि उसने अपनी बारी में ही उस परीक्षा/टेस्ट को पास कर लिया था।

19. कनिष्ठ लेखापालों के कनिष्ठ स्टेशन निरीक्षकों या कनिष्ठ स्टोर लेखा-निरीक्षकों के रूप में प्रोन्नति के लिए ज्येष्ठता—

कनिष्ठ लेखापाल या कनिष्ठ स्टेशन निरीक्षक या कनिष्ठ स्टोर लेखा निरीक्षक की पंक्ति में प्रोन्नति के लिए ज्येष्ठता की गणना उन पंक्तियों में प्रोन्नति के लिए अर्हक परीक्षाएं पास करने की तारीख के अनुसार ही पूर्णत: की जाएगी। ऐसे अभ्यर्थी जो कि किसी वर्ष परीक्षा पास करते हैं, उन व्यक्तियों से जो कि बाद वाले वर्ष में अर्हित होते हैं, परीक्षा पास करने के पूर्व उनकी सापेक्ष ज्येष्ठता के बावजूद भी, तथ्यत: ज्येष्ठ होते हैं। भूतपूर्व कम्पनी-रेलवे के ऐसे कर्मचारिवृन्द की दशा में

---

may be, shall be determined with reference to their substantive or basic seniority.

18. A railway servant who, for reasons beyond his control is unable to appear in the examination/test in his turn along with others, shall be given the examination/test immediately he is available and if he passes the same, he shall be entitled for promotion to the post as if he had passed the examination/test in his turn.

19. Seniority for promotion as Junior Accountants, Junior Inspectors of Station or Stores Accounts :—

Seniority for promotion to the rank of junior accountant or junior inspector of Station or Stores Accounts should count entirely according to the date of passing the examination qualifying for promotion to those ranks. Candidates who pass the examination in a year are ipso facto senior to those who qualify in subsequent years irrespective of their relative seniority before passing the examination. In

जिन्हें उक्त परीक्षा पास करने से छूट प्राप्त है, वह तारीख जिसको वे लेखापाल या निरीक्षक की पंक्ति में प्रोन्नति के लिए उपयुक्त घोषित किए जाते हैं, उनके पास करने की तारीख मानी जानी चाहिए। उपर्युक्त परीक्षा का परिणाम प्राप्त होने पर प्रत्येक रेल प्रशासन को यह चाहिए कि वह, भूतपूर्व कम्पनी या भूतपूर्व स्टेट-रेलवे के ऐसे पात्र-कर्मचारिवृन्द के साथ-साथ, सफल घोषित अभ्यर्थियों का चयन करने के लिए टेस्ट आयोजित करे, जिनसे समय-समय पर रेलवे बोर्ड द्वारा अधिकथित प्रक्रिया के अनुसार चयन बोर्ड के समक्ष उपस्थित होने के लिए कहा जा सकेगा। जब कि भूतपूर्व कम्पनी या भूतपूर्व स्टेट रेलवे के कर्मचारिवृन्द की दशा में, चयन बोर्ड उनका नाम नामिका (पैनल) में दर्ज करने के पूर्व लेखापाल/निरीक्षक के रूप में प्रोन्नति के लिए, उनकी उपयुक्तता का अवधारण करेगा, ऐसा कोई भी अभ्यर्थी जो कि उक्त परीक्षा में अर्हित हुआ है, कनिष्ठ लेखापाल/निरीक्षक के रूप में प्रोन्नति के लिए अपात्र घोषित नहीं किया जाएगा, और चयन बोर्ड प्रत्येक ऐसे अभ्यर्थी को योग्यताक्रम में उपयुक्त स्थान मात्र समनुदिष्ट करेगा। ऐसे कर्मचारिवृन्द को जिनके नाम, किसी एक वर्ष में नामिका में रखे गए हों, उन व्यक्तियों की अपेक्षा ज्येष्ठ पंक्तिबद्ध किया जाएगा, जिनका नाम बाद वाले वर्षों में नामिका में रखा गया हो।

---

the case of staff of Ex-Company Railways, who are exempted from passing the examination, the date on which they are declared fit for promotion to the rank of Accountant or Inspector should be considered as the date of their passing. On receipt of the result of the above examination each railway administration should immediately hold a selection test of the candidates declared successful along with any eligible ex-Company or ex-State Railway staff, who may be asked to appear before selection board in accordance with the procedure laid down by the Railway Board from time to time. While the selection board will determine in the case of the ex-Company or ex-State Railway staff, their suitability for promotion as accountant/Inspector before placing them on the panel, no candidate who has qualified in the said examination will be declared ineligible for promotion as a junior Accountant/Inspector, the selection board only assigning a suitable place to each such candidate in order of merit. The staff placed on the panel in any year will rank senior to those empanelled in subsequent years.

20. ज्येष्ठता विनियमित करने के लिए विभागीय परीक्षा/टैस्ट पास करने की तारीख :

(क) नीचे दिए गए उप-पैरा (ख) में यथा उपबंधित के सिवाय, दो या दो से अधिक ऐसे रेल सेवकों की ज्येष्ठता, जो कि भिन्न-भिन्न तारीख को ऐसी विभागीय/परीक्षा/टेस्ट पास करते हैं, जिसे एक अविच्छिन्न परीक्षा के रूप में न माना गया हो, परीक्षा या टेस्ट पास करने की तारीख के आधार पर ही पूर्णतः विनियमित की जाएगी।

(ख) लेखा-लिपिक, ग्रेड I और स्टाक सत्यापन-कर्त्ता (वेरीफायर) की ज्येष्ठता, उन तारीखों के बावजूद जिनको वे उस प्रयोजन के लिए विहित परीक्षा पास करके लिपिक ग्रेड I के रूप में प्रोन्नत किए जाने के लिए अर्हित हुए थे, उनकी अधिष्ठायी या आधारिक ज्येष्ठता के संदर्भ में अवधारित की जाएगी।

21. गैर-चयन पदों पर प्रोन्नत होने पर ज्येष्ठता :

गैर-चयन पदों पर जो प्रोन्नति होगी, वह ज्येष्ठता तथा उपयुक्तता जिसका निर्णय उस प्राधिकारी द्वारा किया जाएगा जो कि वह पद भरने के

---

20. Date of passing the Departmental Examination/Test to regulate seniority.

(a) Except as provided for in sub-paragraph (b) below, seniority of two or more railway servants, who pass the departmental examination/test on different dates, not treated as one continuous examination, will be regulated entirely by the date of passing the examination or test.

(b) The seniority of Accounts Clerks, Grade I, and Stock Verifirers is to be determined with reference to their substantive or basic seniority in Grade II irrespective of the dates they qualify for promotion as Clerks Grade I by passing the examination prescribed for the purpose.

21. Seniority on promotion to non-section posts :

Promotion to non-selection posts shall be on the basis of seniority-cum-suitability being judged by the authority

लिए सक्षम है, ऐसा मौखिक और/या लिखित टेस्ट या विभागीय परीक्षा जैसा कि आवश्यक समझा जाए, और सेवा-अभिलेख के आधार पर किया जाएगा। इसका एक मात्र अपवाद उन मामलों में होगा जिनमें ऐसी प्रशासनिक सुविधा के लिए, जो कि लिखित रूप में अभिलिखित होनी चाहिए, सक्षम प्राधिकारी, ज्येष्ठतम उपयुक्त रेल कर्मचारी से भिन्न रेल विभाग के ऐसे सेवक को ऐसी अल्पावधिक रिक्ति में जो कि, नियम के तौर पर, दो मास से और किसी भी स्थिति में चार मास से अनधिक की हो, स्थानापन्न रूप में कार्य करने के लिए नियुक्ति करना आवश्यक समझता है। किन्तु इस बात के कारण रेल विभाग के सेवक को ऐसा कोई लाभ प्राप्त नहीं होगा जो कि उसे अन्यथा उपलभ्य न हो।"

परीक्षा के लिए पाठ्य-विवरण के अतिरिक्त, परिशिष्ट 2 में निम्नलिखित उपबंध किए गए हैं :

*"3. प्रत्येक कार्यालय अध्यक्ष परीक्षा आयोजित करेगा, जो कि उन अन्तरालों का विनिश्चय भी करेगा, जिनके बाद परीक्षा आयोजित की जानी चाहिए।

4. (क) प्रसामान्यत: किसी भी रेल सेवक को तीन बार से अधिक परीक्षा में बैठने की अनुज्ञा नहीं दी जाएगी, किन्तु वित्तीय

---

competent to fill the post, by oral and/or written test or a departmental examination as considered necessary and the record of service. The only exception to this would be in cases where for administrative convenience, which should be recorded in writing, the competent authority considers it necessary to appoint a railway servant other than the seniormost suitable railway servant to officiate in a short term vacancy not exceeding two months as a rule and 4 months in any case. This will, however, not give the railway servant any advantage not otherwise due to him".

Appendix 2, in addition to the syllabus for the examination provides :

*"3. The examination will be conducted by the Head of each office, who will also decide the intervals at which it should be held.

4. (a) Normally no railway servant will be permitted to take the examination more than three, but

सलाहकार और मुख्य लेखा अधिकारी, उपयुक्त मामलों में, किसी अभ्यर्थी को चौथी बार और, बहुत ही आपवादिक मामलों में, महाप्रबन्धक उस अभ्यर्थी को पांचवी और अन्तिम बार परीक्षा में बैठने की अनुज्ञा दे सकेगा।

(ख) किसी भी रेल सेवक को जिसने रेल लेखा कार्यालय में छह मास से कम की सेवा की है या जिसे परीक्षा पास करने का युक्तियुक्त संभावना न हो, इस परिशिष्ट में विहित परीक्षा में बैठने की इजाज़त नहीं दी जाएगी। आपवादिक परिस्थितियों में महाप्रबन्धक छह मास की न्यूनतम सेवा सम्बन्धी शर्त का अधित्यजन कर सकेगा।

(ग) अस्थायी रेल सेवकों को परीक्षा में बैठने की अनुज्ञा दी जा सकेगी किन्तु यह स्पष्ट रूप से समझ लिया जाना चाहिए कि इस परीक्षा के पास करने के परिणामस्वरूप स्थायी काडर में आमेलित होने का अधिकार उन्हें प्राप्त नहीं होगा।

(घ) ऐसे अभ्यर्थी को, जो परीक्षा में असफल हो गया है, किन्त जिसने किसी विषय में 50 प्रतिशत से अन्यून अंक प्राप्त करके

---

the Financial Adviser and Chief Accounts Officer may in deserving cases permit a candidate to take the examination for a fourth time, and, in very exceptional cases, the General Manager may permit a candidate to take the examination for the fifth and the last time.

(b) No railway servant, who has less than six months service in a Railway Accounts Office or who has not a reasonable chance of passing the examination will be allowed to appear in the examination prescribed in this Appendix. In exceptional circumstances, the condition regarding six month's minimum service may be waived by the Genral Manager.

(c) Temporary railway servants may be permitted to sit for the examination but it should be clearly understood that the passing of this examination will not give them a claim for absorption in the permanent cadre.

(d) A candidate who fails in the examination but shows marked excellence by obtaining not

स्पष्ट प्रकर्ष (एक्सेलेंस) दर्शित किया है, बाद वाली परीक्षा में उस विषय में परीक्षा देने से छूट दी जा सकेगी।"

यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि पैरा 49 ग्रेड II के ऐसे लिपिकों को जो कि परिशिष्ट 2 वाली परीक्षा पास करते हैं, तुरन्त प्रोन्नत किए जाने का कोई अधिकार प्रदत्त नहीं करता। उनका जो एक मात्र अधिकार प्रतीत होता है, वह यह है कि उनके रास्ते से एक कठिनाई दूर हो जाती है और वे इस बात के पात्र हो जाते हैं कि उनके मामले पर ग्रेड I में प्रोन्नत किए जाने के लिए विचार किया जाए। यह प्रोन्नति ज्येष्ठता तथा उपयुक्तता की कसौटी पर कसी जाती है। ऐसे सभी व्यक्ति जो कि प्रोन्नति के लिए अर्हित होते हैं, इस प्रयोजन के लिए समान माने जाते हैं और उन्हें इस प्रकार से साथ-साथ एक समूह में इस प्रकार रखा जाता है, मानो कि वे एक वर्ग गठित करते हों। इस तथ्य के कारण कि कोई व्यक्ति निश्चित समय से पहले अर्हित हो गया है, उसे उन व्यक्तियों के मुकाबले जो कि बाद में अर्हित होते हैं, प्रोन्नति का अधिमान्य अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता। यह परीक्षा अविच्छिन्न परीक्षा समझी जाती है और जैसा कि पैरा 17 से स्पष्ट है, इस परीक्षा में मिली सफलता ज्येष्ठता का आधार नहीं होती है, जो कि ग्रेड II में की अधिष्ठायी या आधारिक ज्येष्ठता पर निर्भर बनी रहती है। अवधारण के लिए जो प्रश्न प्रत्यक्ष रूप से उत्पन्न होता है, वह यह है कि "क्या इन अनुदेशों में अधिकथित प्रक्रिया के परिणामस्वरूप अनुच्छेद 14 और 16 द्वारा यथाप्रत्याभूत पिटीशनरों के अधिकारों का अतिक्रमण हुआ है। राज्य जिसे ऐसी भिन्न-भिन्न समस्याओं का सामना करना होता है जो कि विभिन्न परिस्थितियों से उत्पन्न होती हैं, अपने भिन्न-भिन्न विभागों में प्रोन्नति के पात्र होने के लिए सबसे अच्छी सेवा सुनिश्चित करने की दृष्टि से दक्षता की शर्तें और अन्य शर्तें अधिकथित करने का हकदार होता है। वर्तमान मामले में इसके पहले उद्धृत उपबन्धों द्वारा जो उद्देश्य प्राप्त करना ईप्सित है, वह रेल स्थापन के लेखा विभाग में अपेक्षित दक्षता है। विभागीय प्राधिकारी अपनी आवश्यकताओं का उचित निर्णायक होता है।

8. सीधी भर्ती किए गए व्यक्ति और प्रोन्नति द्वारा भर्ती किए गए व्यक्ति, जैसे कि पिटीशनर हैं, हमारी राय में, स्पष्ट रूप से भिन्न-भिन्न वर्ग गठित करते हैं और यह पृथक्करण ऐसे बोद्धगम्य प्रभेदक चिह्न के आधार पर कायम किया जा सकता है जिसका कि दक्षता के उस उद्देश्य से युक्तियुक्त

---

less than 50% in any subject may be exempted further examination in that subject in subsequent examination."

1970(2) eILR(PAT) SC 37

सम्बन्ध है, जो प्राप्त करना ईप्सित है। ग्रेड I में जो प्रोन्नति की जाती है, वह ज्येष्ठता तथा योग्यता को ध्यान में रखकर निश्चित की जाती है। अतः जो उपबन्धन ग्रेड II वाले ऐसे सभी लिपिकों को जो कि परिशिष्ट 2 वाली परीक्षा पास करके अर्हित हो गए हैं, एक ही समूह में रखता है, उसमें ग़लती निकालना कठिन है। इस तथ्य के कारण भी कि ग्रेड II में से प्रोन्नत किए गए ऐसे व्यक्तियों को जिन्होंने उस समय तक स्थापन्न के रूप में कार्य किया है, इस कालावधि का लाभ उस समय नहीं दिया जाता, जब कि स्थायी रिक्ति होती है, अनुच्छेद 14 और 16 में अन्तर्विष्ट प्रतिषेद्ध लागू नहीं होता है। उसके परिणामस्वरूप कोई भी प्रतिकूल विभेद उत्पन्न नहीं होता है और वह न तो मनमाना है और न ही अयुक्तियुक्त। वह ग्रेड II के ऐसे लिपिकों के सभी सदस्यों को समान रूप से लागू होता है, जो कि अर्हित हो गए हैं और उसके पात्र हैं। इस मामले में विभेद साबित करने का भार पिटीशनरों पर है और उन्हें यह दर्शित करना चाहिए कि वर्गीकरण न्यायोचित और युक्तियुक्त आधार पर नहीं किया गया है। पिटीशनरों की ओर से जिस अन्तर पर ज़ोर दिया गया है, वह गम्भीर दलील का आधार बनाने के लिए अतिसूक्ष्म है। अतः उनकी चुनौती असफल हो गई है।

9. **मरविन काउंटिन्डो** बनाम **सीमा शुल्क कलक्टर, मुम्बई**[1] वाले मामले में जो विनिश्चय दिया गया था और जिसका आश्रय पिटीशनरों की ओर से लिया गया था, उसमें भिन्न समस्या पर विचार किया गया था, यद्यपि उसमें अधिकथित विधि का सिद्धान्त पिटीशनरों की दलील के विरुद्ध प्रतीत होता है। अभिव्यक्त रूप से यह मत व्यक्त किया गया था कि ऐसे मामले में जिसमें सीधी भर्ती वाले व्यक्तियों और प्रोन्नत किए गए व्यक्तियों के निश्चित अनुपात में सेवा निर्मित की गई है, घूर्णन (रोटेशन) द्वारा ज्येष्ठता नियत करने के सिद्धान्त में कोई भी अन्तर्निहित बुराई नहीं है। चूंकि सीधी भर्ती वाले व्यक्तियों और प्रोन्नत किए गए व्यक्तियों के बीच भर्ती की दो शर्तों के रूप में जो प्रभेद है, वह मान्य अन्तर है, तथा जो कि समानता से सम्बन्धित खण्डों के लिए घातक नहीं है, अतः ऐसे उपबन्ध जिनका कि हमसे सम्बन्ध है, इस विनिश्चय के विनिश्चयाधार पर अभिखण्डित नहीं किए जा सकते।

10. तदनुसार पिटीशन निष्फल होता है और उसे खारिज किया जाता है, किन्तु खर्चा नहीं दिलवाया जा रहा है।

पिटीशन खारिज किया गया।

श्री०

---

[1] (1963) 3 एस० सी० आर० 600.

गोपी और अन्य

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

(Gopi and others

Vs.

State af Uttar Pradesh)

(3 फरवरी, 1970)

(मु० न्या० एम० हिदायतुल्लाह, न्या० ए० एन० रे और आई० डी० दुआ)

दण्ड प्रक्रिया संहिता (1898 का अधि० सं० 5), 1898—धारा 165 और 166 (3)—चोरी की रिपोर्ट प्राप्त होने पर ऐसे थानेदार द्वारा अन्वेषण किया जाना वैध है, जिसकी अधिकारिता के भीतर अभियुक्त निवास करते हों और यदि उसके पास यह विश्वास करने का कारण हो कि सम्बन्धित पुलिस को पहुंचने में कुछ समय लग जाएगा—ऐसी स्थिति में अन्वेषण करने वाले थानेदार को ऐसा करने का कारण अवश्य ही अभिलिखित करना चाहिए।

छैंसा थाने में भैंस की चोरी होने सम्बन्धी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के आधार पर वहां के थानेदार ने अपीलार्थियों के मकान की जोकि दानकौर थाने के अधिकार-क्षेत्र में आता था, तलाशी ली, क्योंकि सम्बन्धित थानेदार को बुलवाने में समय लग जाता और इसी बीच वह भैंस गायब हो सकती थी। जब पुलिस दल तलाशी लेने पहुंचा, तो अपीलार्थियों ने, अन्य अनेक व्यक्तियों के साथ, उस पर हमला किया और पुलिस दल के अनेक सदस्यों को यह जानते हुए भी चोटें पहुंचाईं कि वह पुलिस दल है। तदुपरान्त भारतीय दण्ड संहिता की अनेक धाराओं के अधीन उन्हें अभियोजित किया गया तथा विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने ही उन्हें दोषसिद्ध किया। विशेष इजाजत लेकर उन्होंने उच्चतम न्यायालय में यह दलील देते हुए अपील फाइल की है कि (i) एक थानेदार दूसरे थानेदार की अनुज्ञा बिना पश्चात्कथित थानेदार की अधिकारिता के भीतर तलाशी लेना अवैध हैं; चूंकि इस मामले में सम्बन्धित थानेदार से अनुज्ञा न लेने का यह कारण कि वह थानेदार अपीलार्थियों से मिला हुआ है, ठीक नहीं जान पड़ता, अत: धारा 166(3) की अपेक्षाओं की पूर्ति नहीं हुई है; (ii) दूसरी बात यह है कि अन्वेषण करने वाले थानेदार ने ऐसा करने का कारण अभिलिखित नहीं किया;

इसी कारण धारा 165 और 166 की अपेक्षाओं की पूर्ति नहीं हुई है, जो कि अवैध है; (iii) चूंकि वह कार्य अवैध है, अतः वह असद्भाविक है; और (iv) यह कि अपीलार्थियों को प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार प्राप्त था, क्योंकि उन्होंने उन्हें डाकू समझा था। अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित—इसमें संदेह नहीं है कि वह संहिता का प्रसामान्य उपबन्ध है किन्तु उसके साथ ही धारा 166 के उपबन्धों को भी देखना चाहिए। उस धारा की उपधारा (1) के अधीन पुलिस अधिकारी किसी अन्य अधिकारिता वाले थानेदार की सहायता ले सकता है और उससे तलाशी लेने के लिए कह सकता है। यह मत व्यक्त किया गया कि उप-निरीक्षक केसर सिंह को भी यह करना चाहिए था। किन्तु थानेदार की शक्तियां केवल इतने तक ही सीमित नहीं हैं, क्योंकि उस धारा की उपधारा (3) थानेदार को उस दशा में किसी अन्य थाने के थानेदार की अधिकारिता में तलाशी लेने का अधिकार और प्राधिकार देती है, यदि उसे यह विश्वास करने का कारण हो कि यदि अन्य थाने के प्रभारी से यह अपेक्षा की जाएगी कि वह तलाशी ले, तो विलम्ब होगा और उसके परिणामस्वरूप अपराध करने सम्बन्धी साक्ष्य छिपा लिया जाएगा या नष्ट कर दिया जाएगा। (पैरा 6)

चुराए गए ढोर की दशा में समय का बहुत महत्व होता है, क्योंकि यदि सम्बन्धित पशु हटा लिया जाता है और अन्य पशुओं के साथ मिला दिया जाता है, तो उसे पशुओं के बड़े झुन्डों में साधारण रूप से पता लगाना बहुत कठिन हैं। अतः पुलिस अधिकारी के पास यह विश्वास करने का कारण था कि दानकौर के पुलिस अधिकारी उस सम्बन्ध में कार्यवाही करने में पर्याप्त समय लेंगे, क्योंकि वे अभियुक्त दल से मिले हुए थे, तो उसे धारा 166 की उपधारा (3) के उपबन्धों का सहारा लेने की और स्वयं ही तलाशी करने की पूरी अधिकारिता प्राप्त थी। (पैरा 7)

इसमें संदेह नहीं कि इस मामले में जो तलाशी ली गई थी, वह सद्भाविक थी और किसी अन्य अधिकारिता में ली गई तलाशी वैध थी, क्योंकि उसके पास यह विश्वास करने का कारण था कि यदि वह तुरन्त कार्यवाही नहीं करेगा, तो साक्ष्य अर्थात् भैंस का खो जाना संभाव्य है। उसने अभियुक्तों को यह इत्तिला दे दी थी कि पुलिस दल ही आया हुआ है और उनके पास पुलिस दल पर या तो डाकुओं के रूप में या किसी अन्य रूप में आत्म प्रतिरक्षास्वरूप हमला करने के लिए कोई कारण नहीं था। (पैरा 8)

दाण्डिक अपीली अधिकारिता : 1967 की दाण्डिक अपील सं० 159.

1964 की दाण्डिक अपील संख्या 2195 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तारीख 28 अप्रैल, 1967 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाज़त लेकर की गई अपील।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री अनिल कुमार गुप्ता, आर० ए० गुप्ता और उमादत्त

प्रत्यर्थी की ओर से — श्री ओ० पी० राना

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायाधिपति एम० हिदायतुल्लाह ने दिया।

मुख्य न्यायाधिपति हिदायतुल्लाह—

अपीलार्थी संख्या में पांच हैं जिन्हें भारतीय दण्ड संहिता की विभिन्न धाराओं के अधीन जिसमें भारतीय दण्ड संहिता की धारा 147 और 148 तथा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 333 और 353 शामिल थी, ग्यारह अन्य व्यक्तियों के साथ प्रारम्भतः अभियोजित किया गया। इस मामले में प्रारम्भ में जो 16 अभियुक्त थे उनमें से 11 को सेशन न्यायालय में दोषमुक्त कर दिया। अपील करने पर उच्च न्यायालय ने कुछ उपांतरणों सहित उनकी दोषसिद्धि की पुष्टि कर दी और उनके विरुद्ध पारित दण्डादेशों को कम कर दिया। उच्च न्यायालय के निर्णय के परिणामस्वरूप अपीलार्थियों में से एक अभियुक्त गोपी को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 326 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और उसे छह मास का कठिन कारावास का दण्डादेश दिया गया है, तथा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 348 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और उसी प्रकार का दण्डादेश दिया गया है तथा कारावास के या दोनों ही दण्डादेश साथ-साथ चलने थे। अन्य व्यक्तियों को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 147 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और उन्हें इतनी कालावधि के कारावास से दण्डादिष्ट किया गया है जितना कि उन्होंने भुगत लिया है, जिसके बारे में हमें बताया गया है कि वह दो सप्ताहों के लगभग का था। अब विशेष इजाज़त लेकर अपनी दोषसिद्धियों और दण्डादेशों के विरुद्ध इस न्यायालय में अपील फाइल की है।

2. इस मामले के तथ्य निम्नलिखित हैं। नवम्बर, 1963 में गुड़गांव जिले में (जो कि तत्समय पंजाब का भाग था और अब हरियाणा का भाग है) छैंसा ग्राम के राजबीर नाम के एक व्यक्ति की भैंस की चोरी हो गई। राजबीर का संदेह यह था कि अपीलार्थी गोपी और मुन्शी ने ही भैंस की चोरी की है और यह

कि उन्होंने उसे उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर जिले में धनकौर थाना-क्षेत्र स्थित गुनपारा गांव में रखा है। कुछ ऐसे भी अभिकथन किए गए हैं कि गोपी और मुन्शी ने भैंस को वापस करने के लिए 200 रुपये की राशि मांगी थी; यह कि रकम का संदाय कर दिया गया किन्तु भैंस वापस नहीं की गई। हमारा सम्बन्ध इस कथन की सचाई से नहीं है भैंस की चोरी की रिपोर्ट 26 नवम्बर, 1963 को छैंसा थाने में दर्ज कराई गई। वह रिपोर्ट केसर सिंह (अभि० सा० 1) थानेदार के पास भेजी गई जो कि उस समय एक-दूसरे गांव में था और वह तीन सिपाहियों और कुछ अन्य ग्रामवासियों को लेकर गुनपारा गया। गांव से उसने अपने साथ राजे और चन्दर नाम के दो अन्य व्यक्तियों को साथ लिया। पुलिसदल रायफल, एक रिवालवर और लाठियों से लैस था। वे गोपी और मुन्शी के मकान पर पूर्वाह्न 11 बजे के लगभग पहुंचे और उन्हें अपने मकान के सामने सोता पाया। पुलिस ने गोपी और मुन्शी को उठाया और उन्हें यह इत्तिला दी कि पुलिसदल भैंस तलाश करने आया हुआ है अभियोजन का पक्षकथन यह है कि तदुपरान्त गोपी और मुन्शी ने यह शोर मचाया कि पुलिस आयी हुई है और उस पर अपीलार्थी तथा कुछ अन्य व्यक्तियों ने पुलिस दल पर बहुत बुरी तरह से हमला किया जिससे कि पुलिसदल के केसर सिंह, मोहर सिंह और श्री राम को सादा क्षतियां पहुंची और जोधरा राम को गम्भीर क्षति पहुंची। जोधरा राम को जो क्षति पहुंची थी, वह उसके सिर पर फरसे से कारित की गई थी और उसका भेजा फट गया था। उसके बाद जब कि पुलिसदल वापस जा रहा था, तो उसे पुनः घेर लिया गया और अभिकथन यह है कि केसर सिंह को दोषपूर्ण रीति से नवरंगपुर में परिरुद्ध किया गया। उस समय धनकौर थाने के सिपाही मुलायम सिंह ने उसे बताया, और तब केसर सिंह गुनपारा गया जहां कि उसने धनकौर के थानेदार को जो कि उस समय तक वापस आ गया था। इस मामले की रिपोर्ट की यहां यह बात बताई जा सकती है अपीलार्थियों की ओर से घटना की रात को पूर्वाह्न 4 बजे धनकौर थाने में यह शिकायत करते हुए रिपोर्ट दर्ज कराई गई कि कुछ व्यक्तियों ने गोपी और मुन्शी के मकानों पर डकैती करने की कोशिश की, जो कि पुलिस वर्दी (यूनिफार्म) पहने हुए थे। उसके बाद अन्वेषण किया गया और ग्यारह व्यक्तियों सहित जिन्हें कि अब दोषमुक्त कर दिया गया है, अपीलार्थियों को अभियोजित किया गया।

3. उच्च न्यायालय ने इस बात पर विचार किया कि क्या केसर सिंह को अपने थाने की सीमाओं के बाहर तलाशी लेना सद्भाविक था या अपने पद का दुरुपयोग था। उसने यह निष्कर्ष निकाला कि वह सद्भाविक नहीं था क्योंकि केसर सिंह धनकौर के थानेदार से आसानी के साथ यह कह सकता था कि डण्ड

प्रक्रिया संहिता की धारा 166 (1) के अधीन तलाशी ली जाए। उसका स्पष्टीकरण कि धनकौर की पुलिस अपीलार्थियों के दल से मिली हुई थी, लचर बहाना समझा गया। किन्तु उच्च न्यायालय ने यह महसूस किया कि अपीलार्थियों की कार्यवाही दाण्डिक थी, क्योंकि वे जानते थे कि वह पुलिसदल है।

4. इस अपील में, अपीलार्थी ने इसके पहले इस न्यायालय के समक्ष इस बात का वचन दिया था कि वे मात्र विधि के मुद्दे के बारे में दलील पेश करेंगे और यह कि इसलिए अभिलेख को मुद्रित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके परिणामस्वरूप हमारे समक्ष कोई भी साक्ष्य नहीं है। हमारे समक्ष जो कुछ भी है वह उच्च न्यायालय के निर्णय की प्रति है और उन आधारों सहित विशेष इजाज़त सम्बन्धी पिटीशन है, जिन पर इस अपील के सम्बन्ध में दलील दी जानी है। अपीलार्थियों की ओर से विधि सम्बन्धी जो एक मात्र प्रश्न है वह यह है कि तलाशी अवैध थी और इसलिए अपीलार्थियों को उसका प्रतिविरोध करने का हर प्रकार का अधिकार प्राप्त है और इसके अलावा यह कि उन्होंने यह सोचकर कि छापा मारने वाला दल डाकू लोग हैं जो कि पुलिस वर्दी (यूनिफार्म) में हैं, प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग में तलाशी करने वाले दल का प्रतिविरोध किया।

5. छापा मारने वाले दल को पहचानने के बारे में अपीलार्थियों के ज्ञान के सम्बन्ध में, हमने इस सम्बन्ध में साक्षियों के साक्ष्य को अपने समक्ष मंगवाया। उस साक्ष्य से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि थानेदार केसर सिंह ने गोपी और मुन्शी को यह संसूचित कर दिया कि यह छापा पुलिसदल ने मारा है जो कि खोई हुई भैंस के लिए उनके परिसर की तलाशी लेने आया हुआ है। अतः अपीलार्थियों का यह कथन कि उन्होंने छापा मारने वाले दल को डाकू समझा था, सच नहीं है और इसी कारण से हम उस पर विश्वास नहीं करते।

6. किन्तु दलील यह पेश की गई कि धारा 165 के अधीन थानेदार द्वारा तलाशी लेने की शक्तियां उसके थाने की सीमाओं तक ही सीमित हैं और वह किसी अन्य थानेदार की अधिकारिता के भीतर तलाशी नहीं ले सकता। इस बात को साबित करने के लिए धारा 165 के उपबन्ध का आश्रय लिया गया। इसमें संदेह नहीं है कि वह संहिता का प्रसामान्य उपबन्ध है किन्तु उसके साथ ही धारा 166 के उपबन्धों को भी देखना चाहिए। उस धारा की उपधारा (1) के अधीन पुलिस अधिकारी किसी अन्य अधिकारिता वाले थानेदार की सहायता ले सकता है और उससे तलाशी लेने के लिए कह सकता है। यह मत व्यक्त किया गया कि उप-निरीक्षक केसर सिंह को भी यह करना चाहिए था। किन्तु थानेदार

1970(2) eILR(PAT) SC 37

की शक्तियां केवल इतने तक ही सीमित नहीं हैं क्योंकि उस धारा की उपधारा (3) थानेदार को उस दशा में किसी अन्य थाने के थानेदार की अधिकारिता में तलाशी लेने का अधिकार और प्राधिकार देती है, यदि उसे यह विश्वास करने का कारण हो कि यदि अन्य थाने के प्रभारी अधिकारी से यह अपेक्षा की जाएगी कि वह तलाशी ले, तो विलम्ब होगा और उसके परिणामस्वरूप अपराध करने सम्बन्धी साक्ष्य छिपा लिया जाएगा या नष्ट कर लिया जाएगा। ऐसा प्रतीत होता है कि उप-निरीक्षक केसर सिंह ने यही किया है। स्पष्टीकरण यह था कि धनकौर की पुलिस उन अभियुक्तों से मिली हुई थी जिन्होंने भैंस चुराई थी और इसी कारण से उसने तलाशी करने का तथा भैंस का पता लगाने का दायित्व स्वयं ही अपने ऊपर लिया। हमारी राय में जो स्पष्टीकरण दिया गया है, वह विश्वसनीय है क्योंकि मामूली तौर से कोई भी पुलिस अधिकारी किसी अन्य अधिकारिता के भीतर तब तक नहीं जाता है, जब तक कि ऐसा करने के वैवश्यक कारण न हों। कुछ सप्ताह पहले भैंस चोरी गई थी और उसे खोज निकालने के लिए कुछ भी नहीं किया गया। इन परिस्थितियों में उप-निरीक्षक केसर सिंह ने यह विश्वास किया होगा कि यदि वह तुरन्त कार्यवाही नहीं करेगा, भैंस कभी भी नहीं मिलेगी। अतः उसकी कार्यवाही सम्यक् सावधानी और ध्यान के साथ की गई थी और उसके बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि वह असद्भाविक थी।

7. किन्तु यह दलील दी गई है कि यह उपधारा विलम्ब से बचने तक ही सीमित है और यहां पर ऐसा कोई भी मामला नहीं बताया गया कि वह धनकौर थाने का थानेदार तलाशी लेने के लिए बुलाया जाता, तो उसमें विलम्ब होने की संभाव्यता थी। हमारी राय में, चुराए गए ढोर की दशा में समय का बहुत महत्व होता है क्योंकि यदि सम्बन्धित पशु हटा लिया जाता है और अन्य पशुओं के साथ मिला दिया जाता है तो उसे पशुओं के बड़े झुण्डों में साधारण रूप से पता लगाना बहुत कठिन है अतः पुलिस अधिकारी के पास यह विश्वास करने का कारण था कि धनकौर के पुलिस अधिकारी उस सम्बन्ध में कार्यवाही करने में पर्याप्त समय लेंगे क्योंकि वे अभियुक्त दल से मिले हुए थे तो उसे धारा 166 की उपधारा (3) के उपबंधों का सहारा लेने की और स्वयं ही तलाशी करने की पूरी अधिकारिता प्राप्त थी।

8. हमारे समक्ष यह दलील दी गई कि धारा 165 द्वारा तथा धारा 166 द्वारा भी यथा-अपेक्षित लिखित रूप में अपने कारण अभिलिखित करने चाहिएं थे। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उप-निरीक्षक से यह कहलवाने की कोई भी कोशिश

नहीं की गई कि क्या कारण अभिलिखित किए गए थे या नहीं। शासकीय कारणों की अनियमितता का ध्यान रखते हुए हम यह उपधारणा करने के हकदार हैं कि निरीक्षक ने अपने कारण अभिलिखित करने की सावाधानी बरती होगी किसी भी स्थिति में हम अभियोजन पक्ष के विरुद्ध यह अभिनिर्धारित नहीं कर सकते क्योंकि ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिसके आधार पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकें। अतः हमारा समाधान हो गया है कि इस मामले में जो तलाशी ली गई थी वह सद्‌भाविक थी और किसी अन्य अधिकारिता में केसर सिंह ने जो तलाशी ली थी, वह वैध रूप से ली गई थी क्योंकि उसके पास यह विश्वास करने का कारण था कि यदि वह तुरन्त कार्यवाही नहीं करेगा तो साक्ष्य अर्थात् भैंस का खो जाना संभाव्य है उसने अभियुक्तों को यह इत्तिला दे दी थी कि पुलिसदल ही आया हुआ है और उनके पास पुलिस बल पर या तो डाकुओं के रूप में या किसी अन्य रूप में आत्म प्रतिरक्षास्वरूप हमला करने के लिए कोई कारण नहीं था। अतः अपीलार्थियों का अपराध उन्हें पर्याप्त रूप से बता दिया गया। उसमें हमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता। अपील असफल होती है और खारिज की जाती है।

अपील खारिज की गई।

श्री०

———

के० ए० नटराजन आदि

बनाम

एम० नैना मुहम्मद और अन्य आदि

(K. A. Natrajan etc.

Vs.

M. Naina Mohammad and Others etc.)

(3 फरवरी, 1970)

(मु० न्या० एम० हिदायतुल्लाह, न्या० एम० शैलत, जी० के० मित्तर, ए० एन० रे और आई० डी० दुआ)

संविधान—अनुच्छेद 136—उच्च न्यायालय की लैटर्स पेटेन्ट न्यायपीठ द्वारा एकल न्यायाधीश के आदेश की पुष्टि में अन्तर्वर्ती (इन्टरलाक्यूटरी) आदेश का दिया जाना—उसके विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर पिटीशन फाइल किया जाना—उच्च न्यायालय में उस अपील के लम्बित रहने के दौरान उच्चतम न्यायालय उक्त अनुच्छेद के अधीन मामले पर विचार नहीं कर सकता।

प्रादेशिक परिवहन प्राधिकारी ने प्रत्यर्थी को किसी मार्ग पर बस चलाने का परमिट अनुदत्त किया, किन्तु अन्य आवेदक द्वारा अपील किए जाने पर उस अनुदान को राज्य परिवहन अपील अधिकरण ने अपास्त कर दिया। जिस व्यक्ति को प्रादेशिक परिवहन प्राधिकारी ने परमिट अनुशापत्र अनुदत्त किया था, उसने उस आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में पिटीशन फाइल किया जिसे विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अभिखण्डित कर दिया। जब कि वह मामला उच्च न्यायालय की लैटर्स पेटेन्ट न्यायपीठ के समक्ष पेश किया गया, तो उसने यह मत व्यक्त किया कि चूंकि प्रादेशिक परिवहन प्राधिकारी द्वारा अनुदत्त एकमात्र प्राप्तकर्ता के पास विधिमान्य परमिट है, इसलिए राज्य परिवहन अपील अधिकरण के समक्ष आवेदन प्रस्तुत करने वाले अपीलार्थी को, लैटर्स पेटेन्ट अपील का निपटारा होने तक, कोई परमिट नहीं दिया जा सकता, क्योंकि केवल एक प्रचालक को ही, उस मार्ग पर बस चलाने का परमिट दिया जा सकता है। अतः संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत लेकर उच्चतम न्यायालय में उस अन्तर्वर्ती आदेश के विरुद्ध इस आधार पर पिटीशन फाइल किया गया, कि जब

राज्य परिवहन अपील अधिकरण ने प्राप्तिकर्ता के परमिट को रद्द कर दिया, तो उच्च न्यायालय को यह अधिकारिता प्राप्त नहीं थी कि वह प्रादेशिक परिवहन प्राधिकारी के प्राप्तिकर्ता को परमिट देता। पिटीशन खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित—विशेष इजाज़त लेकर किए गए इन पिटीशनों में जो कि प्रत्यक्षत: अन्तर्वलित कार्यवाहियों में किए गए आदेश के विरुद्ध हैं, जो कोशिश की गई है, वह अपीलार्थी को परमिट वापस दिलवाने की कोशिश है। यह दावा किया गया है कि इसमें अधिकारिता का प्रश्न अन्तर्वलित है और वह प्रश्न यह है कि क्या उच्च न्यायालय प्रादेशिक परिवहन प्राधिकारी के प्राप्तिकर्ता को उस समय मान्यता दे सकता था जब कि राज्य परिवहन अपील अधिकरण ने उसके अनुज्ञापत्र को रद्द कर दिया था। यह मत व्यक्त किया गया कि यह ऐसे मामले हैं जिन पर यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विचार नहीं कर सकता क्योंकि वह अपील अभी उच्च न्यायालय के समक्ष लम्बित है और उच्च न्यायालय ने जो बात की है, वह विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश को प्रभावी बनाने का कार्य मात्र है। अन्य शब्दों में लैटर्स पेटेन्ट न्यायपीठ ने विद्वान् एकल न्यायाधीश के विनिश्चय के प्रवर्तन पर रोक लगाते हुए अपना ही कोई विशेष आदेश पारित करने की कोशिश नहीं की है। अत: इस प्रक्रम में हस्तक्षेप करना गलत होगा। यह हो सकता है कि यह मामला किसी अन्य रूप में उस समय आए जब कि लैटर्स पेटेन्ट विनिश्चय के विरुद्ध इस न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की जाएगी। यदि और जब कि ऐसा होता है, तो उस समय अपील में या आरम्भिक रिट पिटीशनों में ऐसे मामलों पर विचार करने सम्बन्धी उच्च न्यायालय की अधिकारिता के प्रश्न पर हमें अपनी राय व्यक्त करने में सुविधा हो सकेगी। इसके अतिरिक्त इस प्रक्रम पर हम इस ओर या उस ओर अपनी कोई भी राय व्यक्त करना नहीं चाहते। तदनुसार हम विशेष इजाज़त लेकर किए गए इन पिटीशनों को खारिज करने का आदेश देते हैं और ऐसे प्रश्न को उठाने सम्बन्धी पिटीशनरों के अधिकार को उस समय के लिए आरक्षित रखते हैं जब कि वे वैध रूप से उस समय उठाए जा सकेंगे जब कि वे लैटर्स पेटेन्ट न्यायपीठ के विनिश्चय के विरुद्ध अपील फाइल करना चाहें। इस न्यायालय ने जो रोक अनुदत्त की थी, वह उठाई जा रही है। (पैरा 3)

सिविल अपीली अधिकारिता : 1969 की संख्या 2430, 2431, 2436 से 2438, 2442, 2443, 2445, 2446, 2472 और 2480 तथा 1970 की सिविल अपील संख्या 3 में विशेष इजाजत लेकर किए गए पिटीशन।

1969 के सिविल प्रकीर्ण पिटीशन संख्या 15375 आदि में तथा 1969 की रिट अपील संख्या 519 आदि में मद्रास उच्च न्यायालय के तारीख 8 दिसम्बर, 1969 के आदेश के विरुद्ध पिटीशन ।

पिटीशनर की ओर से (1969 के विशेष इजाज़त लेकर किए गए पिटीशन संख्या 2430, 2431 और 2438 में)	सर्वश्री के० के० वेनूगोपाल और आर० गोपालकृष्णन्
पिटीशनर की ओर से (1969 के विशेष इजाज़त लेकर किए गए पिटीशन संख्या 2436 में)	सर्वश्री एस० मोहन कुमारामंगलम्, एम० के० रामामूर्ति, जी० रामा स्वामी, श्यामला पप्पू और विनीत कुमार
पिटीशनर की ओर से (1969 के विशेष इजाज़त लेकर किए गए पिटीशन संख्या 2437 में)	सर्वश्री एम० के० रामामूर्ति, जी० रामास्वामी, श्यामला पप्पू और विनीत कुमार
पिटीशनरों की ओर से (1969 के विशेष इजाज़त लेकर किए गए पिटीशन संख्या 2442, 2443 और 2472 में)	श्री ए० एस० नम्बियार
पिटीशनर की ओर से (1969 के विशेष इजाजत लेकर किए गए पिटीशन संख्या 2445, 2446 और 2480 में और 1970 के संख्या 3 में)	सर्वश्री एम० सी० सीतलवाड़, बी० सुब्रामनियम् और के० जयराम
प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से (1969 के विशेष इजाज़त लेकर किए गए पिटीशन संख्या 2430, 2431, 2436, 2437, 2438, 2442, 2445 और 2472 में)	श्री मदन मोहन

1970(2) eILR(PAT) SC 37

प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से (1969 की विशेष इजाज़त लेकर किए गए पिटीशन संख्या 2445 में)	श्री ओ० सी० माथुर
प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से (1969 के विशेष इजाज़त लेकर किए गए पिटीशन संख्या 2480 में)	श्री आर० गोपालाकृष्णन
प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से (1970 के विशेष इजाजत लेकर किए गए पिटीशन संख्या 3 में)	सर्वश्री के० थिरूमलाई, ए० टी० एम० सम्पथ और सी० अग्रवाल

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायाधिपति एम० हिदायतुल्लाह ने दिया।

मुख्य न्यायाधिपति हिदायतुल्लाह—

ये पिटीशन मद्रास उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ के उस आदेश के विरुद्ध विशेष इजाज़त लेकर फाइल किए गए हैं, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने यह आदेश दिया है कि प्रादेशिक परिवहन प्राधिकारी ने जो परमिट (अनुज्ञा-पत्र) अनुदत्त किए थे, वे प्रवृत्त होंगे, न कि वे जिन्हें राज्य परिवहन अपील अधिकरण ने अनुदत्त किए थे।

2. तथ्यों का वर्णन इस प्रकार से किया जा सकता है; 1969 का विशेष इजाज़त लेकर किया गया पिटीशन संख्या 2430 उदाहरण के तौर पर लिया जा सकता है। प्रादेशिक परिवहन प्राधिकारी द्वारा अनुदत्त (परमिठ) अनुज्ञा-पत्र के मूल प्राप्तिकर्ता को 'क' के रूप में वर्णित किया जा सकता है। अनुदत्त करने की तारीख 20 नवम्बर, 1966 थी। प्रत्यर्थी द्वारा अपील किए जाने पर जिसे 'ख' के रूप में वर्णित किया जा सकता है, राज्य परिवहन अपील अधिकरण ने उस अनुज्ञा-पत्र को जिसे प्रादेशिक परिवहन प्राधिकारी ने 'क' को दिया था, रद्द कर दिया। वह 18 जुलाई, 1967 को दिया गया था। तदुपरान्त 'क' ने रिट पिटीशन फाइल किया और 4 नवम्बर, 1969 को विद्वान् एकल न्यायाधीश ने उसे मंजूर कर लिया तथा राज्य परिवहन अपील अधिकरण के आदेश को अभिखण्डित कर दिया। जब कि मामला लैटर्स पेटेन्ट न्यायपीठ के समक्ष पेश कया गया, तो यह मत व्यक्त किया गया कि इस तथ्य को देखते हुए, कि

प्रादेशिक परिवहन प्राधिकारी ने जिस प्राप्तिकर्ता को अनुज्ञा-पत्र दिया था, उसी के पास विधिमान्य अनुज्ञापत्र था, 'ख' को जिसे राज्य परिवहन अपील अधिकरण ने मान्यता दी थी, कोई अनुज्ञापत्र देना संभव नहीं था। उन्होंने इस न्यायालय के इसके पहले दिए गए विनिर्णय का अनुसरण किया और लैटर्स पेटेन्ट अपील का निपटारा होने तक प्रादेशिक परिवहन प्राधिकारी ने जिस व्यक्ति को अनुज्ञापत्र दिया था, उसके अनुदान को सीमित कर दिया जिसे केवल उस मार्ग पर प्रचलित करने की अनुज्ञा दी गई थी। ऐसा प्रतीत होता है कि केवल एक ही प्रचालक को धारा 47 (3) के अधीन किए गए अवधारण के कारण इस मार्ग पर (गाड़ी चलाने के लिए) अनुज्ञात किया जा सकता था।

3. विशेष इजाज़त लेकर किए गए इन पिटीशनों में जो कि प्रत्यक्षत: अन्तर्वलित कार्यवाहियों में किए गए आदेश के विरुद्ध हैं, जो कोशिश की गई है वह 'ख' को अनुज्ञापत्र (परमिट) वापस दिलवाने की कोशिश है। यह दावा किया गया है कि इसमें अधिकारिता का प्रश्न अन्तर्वलित है और वह प्रश्न यह है कि क्या उच्च न्यायालय प्रादेशिक परिवहन प्राधिकारी के प्राप्तिकर्ता 'क' को उस समय मान्यता दे सकता था जब कि राज्य परिवहन अपील अधिकरण ने उसके अनुज्ञापत्र को रद्द कर दिया था। हम समझते हैं कि यह ऐसे मामले हैं जिन पर यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विचार नहीं कर सकता क्योंकि वह अपील अब उच्च न्यायालय के समक्ष लम्बित है और उच्च न्यायालय ने जो बात की, है वह विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश को प्रभावी बनाने का कार्य मात्र है। अन्य शब्दों में लैटर्स पेटेन्ट न्यायपीठ ने विद्वान् एकल न्यायाधीश के विनिश्चय के प्रवर्तन पर रोक लगाते हुए अपना ही कोई विशेष आदेश पारित करने की कोशिश नहीं की है। मैं समझता हूं कि इस प्रक्रम में हस्तक्षेप करना हमारे लिए गलत होगा। यह हो सकता है कि हमारे समक्ष यह मामला किसी अन्य रूप में उस समय आएं जब कि लैटर्स पेटेन्ट विनिश्चय के विरुद्ध इस न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की जाए। यदि और जब कि ऐसा होता है, तो उस समय अपील में या आरम्भिक रिट पिटीशनों में ऐसे मामलों पर विचार करने सम्बन्धी उच्च न्यायालय की अधिकारिता के प्रश्न पर हमें अपनी राय व्यक्त करने में सुविधा हो सकेगी। इसके अतिरिक्त इस प्रक्रम पर हम इस ओर या उस ओर अपनी कोई भी राय व्यक्त करना नहीं चाहते। तदनुसार हम विशेष इजाज़त लेकर किए गए इन पिटीशनों को खारिज करने का आदेश देते हैं और ऐसे प्रश्न को उठाने सम्बन्धी पिटीशनरों के अधिकार को उस समय के लिए सुरक्षित रखते हैं जब कि वे वैध रूप से उस समय उठा सकेंगे जबकि वे लैटर्स पेटेन्ट न्यायपीठ के विनिश्चय के विरुद्ध अपील फाइल करना चाहेंगे। इस न्यायालय ने जो रोक का आदेश दिया था, उसे उठाया जा रहा है।

विशेष इजाज़त लेकर किए गए पिटीशन खारिज किए गए।

श्री०/

———

जिला कलक्टर, हैदराबाद और अन्य

बनाम

मैसर्स इब्राहीम एण्ड कम्पनी

(District Collector of Hyderabad and Others

Vs.

M/s. Ibrahim and Co.)

(5 फरवरी, 1970)

(मु० न्या० हिदायतुल्लाह, न्या० जे० सी० शाह, के० एस० हेगडे, ए० एन० ग्रोवर, ए० एन० रे और आई० डी० दुआ)

संविधान—अनुच्छेद 301, 305, 358 और 359—(i) राज्य सरकार द्वारा ऐसा कार्यपालक आदेश जारी किया जाना जिसके, परिणामस्वरूप कानूनी उपबन्धों के अधीन अनुदत्त लाइसेंस रद्द हो गया ऐसा आदेश अविधिमान्य है और आपातकालीन स्थिति की घोषणा के प्रवर्तन के बावजूद भी, अनुच्छेद 358 के अधीन उसकी विधिमान्यता को चुनौती दी जा सकती है—(ii) राज्य सरकार द्वारा विद्यमान कानूनी अधिकारों की उपेक्षा करके किसी व्यक्ति को एकाधिकार प्रदत्त करते हुए आदेश दिया जाना विभेद की कोटि में आता है—ऐसे कार्यपालक आदेश को अनुच्छेद 359 के अधीन संरक्षा प्राप्त नहीं है—(iii) उक्त प्रकृति का आदेश अनुच्छेद 301 के अधीन प्रत्याभूत व्यापार और वाणिज्य की स्वतंत्रता का अतिक्रमण है ।

केन्द्रीय सरकार ने भारत रक्षा नियम, 1962 के नियम 25(2) के अधीन शुगर कण्ट्रोल आर्डर (चीनी नियंत्रण आदेश), 1963 प्रख्यापित किया । प्रत्यर्थी जो कि (आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 के अधीन जारी किए गए) आन्ध्र प्रदेश शुगर डीलर्स लाइसेंसिग आर्डर, (आन्ध्र प्रदेश चीनी व्यवहारी अनुज्ञापन आदेश), 1963 के अधीन अनुज्ञप्तिधारी थे, तथा वे हैदराबाद और सिकन्दराबाद नगरों में चीनी नियंत्रण आदेश के अधीन मान्यताप्राप्त व्यवहारी थे । उन्हें चीनी का कोटा आबंटित किया गया किन्तु 1964 में राज्य सरकार ने यह आदेश जारी किया कि उपर्युक्त दोनों नगरों को जो कोटा आबंटित किया गया है, वह पूर्णतः सहकारी भण्डारों को दे दिया जाए । इस प्रकार से सरकार के कार्यपालक

आदेश द्वारा प्रत्यर्थियों को अपना कारबार चलाने से निवारित कर दिया गया। उच्च न्यायालय में उन्होंने उस आदेश को चुनौती दी, जिसके परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय ने वह आदेश अविधिमान्य घोषित कर दिया। अत: राज्य सरकार की ओर से हैदराबाद के कलक्टर ने उच्च न्यायालय के उस निर्णय के विरुद्ध इन आधारों पर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की है कि उक्त कार्यपालक आदेश को संविधान के अनुच्छेद 358 और 359 की संरक्षा प्राप्त है, क्योंकि राष्ट्रपति ने आपातकालीन स्थिति की घोषणा कर दी थी और यह कि उस आदेश से अनुच्छेद 301 का अतिक्रमण नहीं होता। अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित--आपात की उद्घोषणा कर दिए जाने पर राज्य आपात की अस्तित्वावधि के लिए इस बात के होते हुए भी कि वह संविधान के अनुच्छेद 19 द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रताओं का हनन करता है, विधान अधिनियमित करने के लिए सक्षम है। राज्य भी ऐसी कार्यपालक कार्यवाही करने के लिए सक्षम है जिसे राज्य संविधान के अनुच्छेद 19 में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अभाव में कर सकता है। इस मामले में आक्षेपित आदेश उस समय जारी किया गया था जब कि आपात की उद्घोषण प्रवर्तन में थी। प्रत्यर्थी राज्य विधानमण्डल द्वारा अधिनियमित किसी भी विधि की विधिमान्यता को तब तक जब तक कि आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में थी, इस आधार पर चुनौती नहीं दे सकते थे कि उससे अनुच्छेद 19 द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रताओं का हनन होता है। वे किसी ऐसी कार्यपालक कार्यवाही को भी चुनौती नहीं दे सकते थे जो, अनुच्छेद 19 में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अभाव में, करने के लिए राज्य सक्षम होता। (पैरा 9)

राज्य ने प्रत्यर्थियों के कारबार चलाने सम्बन्धी उस मूल अधिकार का जो कि अनुच्छेद 19(1)(छ) द्वारा प्रत्याभूत है, हनन करते हुए कोई विधान नहीं अधिनियमित किया था। उसने केवल कार्यपालक आदेश जारी किया था। किन्तु ऐसा कार्यपालक आदेश जिसको चुनौती नहीं दी जा सकती है, केवल वही आदेश होता है जिसे राज्य, अनुच्छेद 19 में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अभाव में, बनाने के लिए सक्षम होता। राज्य सरकार की ऐसी कार्यपालक कार्यवाही जो कि अन्यथा अविधिमान्य है, मात्र इसलिए चुनौती दिए जाने से निर्मुक्त नहीं हो सकती, क्योंकि आपातकालीन उद्घोषणा उस समय प्रवर्तन में है जब कि वह कार्यवाही की गई है। क्योंकि राज्य सरकार का आदेश आन्ध्र प्रदेश शुगर डीलर्स लाइसेंसिग आर्डर (आन्ध्र प्रदेश चीनी व्यवहारी अनुज्ञापन आदेश) और चीनी नियंत्रण आदेश में अन्तर्विष्ट कानूनी उपबन्धों के स्पष्टत: प्रतिकूल था, इसलिए उसे अनुच्छेद 358 के अधीन संरक्षण प्राप्त नहीं था। (पैरा 10)

और न ही उसे अनुच्छेद 359 के अधीन संरक्षण प्राप्त था। 3 नवम्बर, 1962 को राष्ट्रपति ने अनुच्छेद 359 के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए यह आदेश जारी किया था कि "संविधान के अनुच्छेद 14, अनुच्छेद 21 और 22 द्वारा प्रदत्त अधिकार के प्रवर्तन के लिए किसी न्यायालय के समक्ष समावेदन प्रस्तुत करने सम्बन्धी किसी व्यक्ति का अधिकार उस कालावधि के लिए उस दशा में निलम्बित रहेगा जिसके दौरान 26 अक्तूबर, 1962 को संविधान के अनुच्छेद 352 के खण्ड (1) के अधीन जारी की गई आपात की उद्घोषणा लागू रहती है, यदि ऐसे व्यक्ति को डिफेन्स ऑफ इण्डिया आर्डीनेंस (भारत रक्षा अध्यादेश), 1962 (1962 का 4) या तद्धीन बनाए गए किसी नियम या आदेश के अधीन किन्हीं ऐसे अधिकारों से वंचित किया गया है।" यदि आक्षेपित आदेश के बारे में यह दर्शित किया गया हो कि वह भारत रक्षा अध्यादेश या तद्धीन बनाए गए नियमों द्वारा आरक्षित प्राधिकार के अधीन जारी किया गया है, केवल तभी अनुच्छेद 14 के अधीन दी गई गारण्टी के हनन से सम्बन्धित पिटीशन को ग्रहण करने सम्बन्धी अधिकारिता को अपवर्जित किया जा सकेगा। किन्तु इस कार्यवाही के बारे में यह दर्शित नहीं किया गया था कि वह भारत रक्षा अध्यादेश के अधीन या तद्धीन बनाए गए नियम या आदेश के अधीन की गई थी। (पैरा 11)

इस में सन्देह नहीं है कि अनुच्छेद 301 के अधीन भारत के राज्य क्षेत्र में सर्वत्र व्यापार, वाणिज्य और समागम निर्बाध होगा। वह स्वतंत्रता व्यापक शब्दों में घोषित की गई है और वह सभी प्रकार के व्यापार वाणिज्य और समागम को लागू होती है। (पैरा 12)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1950]	एल० आर० (1950) ए० सी० 235 : **कामनवैल्थ ऑफ आस्ट्रेलिया बनाम बैंक ऑफ न्यू साउथ वेल्स** (Commonwealth of Australia *Vs.* Bank of New South Wales).	12

सिविल अपीली अधिकारिता : 1966 की सिविल अपील संख्या 1285 से 1309.

1965 की रिट अपील संख्या 34 से लेकर 58 तक में आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के तारीख 23 जनवरी, 1965 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई अपीलें।

अपीलार्थियों की ओर से (सभी अपीलों में)	सर्वश्री पी० रामा रेड्डी और ए० वी० रंगम्
प्रत्यर्थी की ओर से (1966 की सिविल अपील संख्या 1304 में)	सर्वश्री के० राजेन्द्र चौधरी और के० आर० चौधरी

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति जे० सी० शाह ने दिया।

न्यायाधिपति शाह—

यह अपीलें आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के उस आदेश के विरुद्ध विशेष इजाज़त लेकर फाइल की गई हैं, जिसके द्वारा उसने तारीख 30 दिसम्बर, 1964 वाले जी० ओ० एम० संख्या 2976 को "बातिल, शून्य और अधिकारातीत" घोषित किया था।

2. प्रत्यर्थी चीनी और अन्य वस्तुओं के व्यवहारी हैं और हैदराबाद तथा सिकन्दराबाद नगरों में अपना कारबार चलाते हैं। आन्ध्र प्रदेश राज्य ने आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 की धारा 3 द्वारा प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में, आन्ध्र प्रदेश शुगर डीलर्स लाइसेंसिंग आर्डर, (आन्ध्र प्रदेश चीनी व्यवहारी अनुज्ञापन आदेश), 1963 जारी किया। उस आदेश के अधीन कोई भी व्यक्ति विनिर्दिष्ट प्राधिकारी द्वारा जारी की गई अनुज्ञप्ति (लाइसेंस) के निबन्धनों और शर्तों के अधीन और अनुसार के सिवाय व्यवहारी के रूप में कारबार नहीं चला सकेगा। अनुज्ञप्ति का अनुदान और नवीकरण ऐसे आधारों पर ही जो कि लेखबद्ध होने चाहिएं और पक्षकार को अपने पक्ष कथन प्रस्तुत करने का अवसर देने के बाद ही इन्कार किया जा सकता था। प्रत्यर्थी को आन्ध्र प्रदेश शुगर डीलर्स लाइसेंसिंग आर्डर (आन्ध्र प्रदेश चीनी व्यवहारी अनुज्ञापन आदेश), 1963 के अधीन अनुज्ञप्ति अनुदत्त की गई थी। उसके थोड़े दिनों बाद केन्द्रीय सरकार ने भारत रक्षा नियम, 1962 के नियम 125 के उपनियम (2) के अधीन प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में शुगर कण्ट्रोल आर्डर (चीनी नियंत्रण आदेश), 1963 प्रख्यापित किया। उस आदेश के द्वारा मान्यता प्राप्त व्यवहारी की परिभाषा ऐसे व्यक्ति के रूप में की गई थी जो कि चीनी का क्रय करने, विक्रय करने या वितरण करने का कारबार चला रहा हो और चीनी के व्यवहारियों के अनुज्ञापन से सम्बन्धित राज्य में तत्समय प्रवृत्त आदेश के अधीन अनुज्ञप्ति प्राप्त (लाइसेंस्ड) है। उस आदेश में विक्रय पर निर्बन्धन लगाने या विक्रय करने के लिए या उत्पादकों द्वारा परिदान करने के लिए, उत्पादकों या मान्यता प्राप्त व्यवहारियों द्वारा चीनी के उत्पादन, विक्रय, श्रेणीकरण, पैकिंग, परिदान वितरण आदि का नियंत्रण करने

के लिए, चीनी के संचलन को विनियमित करने के लिए, उसकी कीमत नियत करने के लिए, कोटा का आबंटन करने के लिए, ऐसे कोटा का परिदान करने के लिए और अन्य आनुषंगिक मामलों के लिए उपबन्ध किया गया था।

3. चूंकि प्रत्यर्थी आन्ध्र प्रदेश शुगर डीलर्स लाइसेंसिंग आर्डर (आन्ध्र प्रदेश चीनी व्यवहारी अनुज्ञापन आदेश), 1963 के अधीन अनुज्ञप्तिधारी थे इसलिए उन्हें शुगर कण्ट्रोल आर्डर (चीनी नियंत्रण आदेश), 1963 के अधीन मान्यताप्राप्त व्यवहारी के रूप में माना गया। राज्य सरकार ने भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में वितरण के लिए केन्द्रीय सरकार को चीनी के प्रत्येक कोटे का आबंटन का और कारखानों से आबंटित कोटे का परिदान लेने के लिए अनुज्ञप्तिधारियों या व्यवहारियों के नाम निर्दिष्ट किए।

4. 30 दिसम्बर, 1964 को राज्य सरकार ने यह आदेश किया कि हैदराबाद और सिकन्दराबाद के दोनों नगरों को आबंटित चीनी कोटा ग्रेटर हैदराबाद कन्ज्यूमर्स सेन्ट्रल कोआपरेटिव स्टोर, लिमिटेड, हैदराबाद को पूरी तरह से दे दिया जाए। उसके कारण प्रत्यर्थियों को जिनके पास आन्ध्र प्रदेश शुगर लाइसेंसिंग आर्डर (आन्ध्र प्रदेश चीनी अनुज्ञापन आदेश) के अधीन चीनी के वितरण के लिए अनुज्ञप्ति थी और जो कि शुगर कण्ट्रोल आर्डर (चीनी नियंत्रण आदेश), 1963 के अधीन मान्यताप्राप्त व्यवहारी भी थे, चीनी में अपना कारबार चलाने से उस कार्यपालक आज्ञा द्वारा निवारित किया गया।

5. प्रत्यर्थियों ने आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के आदेश की विधिमान्यता को चुनौती देते हुए पिटीशन फाइल किया। राज्य ने उन पिटीशनों को मुख्यतः इस आधार पर प्रतिवाद किया कि राज्य सरकार ने जो आदेश दिया था, वह शुगर कण्ट्रोल आर्डर (चीनी नियंत्रण आदेश) के उपबन्धों के अनुसार था और केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिकथित इस नीति के अनुसार जारी किया गया था कि चीनी के वितरण का कार्य अनन्यतः सहकारी सोसाइटी को ही सौंप दिया जाए और तद्द्वारा चीनी उठाने और उसका वितरण करने में प्राइवेट व्यवहारियों के अभिकरण को, लोक हित में, समाप्त कर दिया जाए। इस बात पर जोर दिया गया कि प्रत्यर्थी इस परिवाद के सम्बन्ध में यह अनुतोष प्राप्त नहीं कर सकते कि इसके द्वारा अनुच्छेद 14 और अनुच्छेद 19 के अधीन उनके अधिकारों का अतिक्रमण हुआ है, क्योंकि अक्तूबर, 1962 में राष्ट्रपति ने जो आपातकालीन घोषणा की थी, उसे वापस नहीं लिया गया था।

6. न्यायाधीश गोपाल कृष्णनन् नायर ने उन पिटीशनों की सुनवाई की। विद्वान् न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि कार्यपालक आदेश को न तो

शुगर कण्ट्रोल आर्डर (चीनी नियन्त्रण आदेश), 1963 के उपबन्धों का जिसे केन्द्रीय सरकार ने जारी किया था, और न आन्ध्र प्रदेश शुगर डीलर्स लाइसेंसिंग आर्डर (आन्ध्र प्रदेश चीनी व्यवहारी अनुज्ञापन आदेश), 1963 का ही समर्थन प्राप्त है, यह कि सरकार ने जो कदम उठाया है, वह विधि द्वारा अनुज्ञात नहीं है; यह कि सरकार के आदेश के परिणामस्वरूप प्रत्यर्थियों के पास जो अनुज्ञप्ति थी, वे आन्ध्र प्रदेश शुगर डीलर्स लाइसेंसिंग आर्डर (आन्ध्र प्रदेश चीनी व्यवहारी अनुज्ञापन आदेश) के खण्ड 7 में अधिकथित प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना रद्द कर दी गई थी; और यह कि आदेश के उपबन्धों के सम्बन्ध में कार्यपालक निदेशों द्वारा छल नहीं किया जा सकता और चूंकि उस आदेश ने प्रत्यर्थियों और सेण्ट्रल कन्ज्यूमर्स कोआपरेटिव स्टोर के बीच विभेद किया था, क्योंकि उसने प्रत्यर्थियों के विद्यमान अधिकारों की उपेक्षा करके एकाधिकार प्रदत्त किया था और जो कि शुगर कण्ट्रोल आर्डर (चीनी नियंत्रण आदेश) के प्रशासन में "शत्रुतापूर्ण और विद्वेषपूर्ण विभेद की कोटि में आता था। इसके अलावा उन्होंने यह भी अभिनिर्धारित किया कि चूंकि सरकार ने भारत रक्षा नियम के अधीन या उन नियमों के अधीन बनाए गए किसी नियन्त्रण आदेश के अधीन कार्यवाही नहीं की थी, अतः प्रत्यर्थी संविधान के अनुच्छेद 358 और 359 के अधीन राज्य द्वारा जारी किए गए आदेश के कारण अपने अधिकारों के हनन के विरुद्ध संरक्षा प्राप्त करने का दावा करने से विवर्जित नहीं थे उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ के समक्ष अपील करने पर न्यायाधीश गोपाल कृष्णनन् नायर ने जिन आधारों पर वह विनिश्चय दिया था उनकी पुष्टि कर दी गई।

7. इन अपीलों में आन्ध्र प्रदेश राज्य के काउन्सेल ने यह दलील नहीं दी है कि आक्षेपित आदेश आन्ध्र प्रदेश शुगर डीलर्स लाइसेंसिंग आर्डर (आन्ध्र प्रदेश चीनी व्यवहारी अनुज्ञापन आदेश), 1963 के अधीन या शुगर कण्ट्रोल आर्डर (चीनी नियंत्रण आदेश), 1963 के अधीन जिसे केन्द्रीय सरकार ने जारी किया हो, जारी नहीं किया जा सकता। इसमें कोई भी विवाद नहीं है कि यह ऐसा कार्यपालक आदेश है जिसे राज्य सरकार ने दिया था यह दावा किया गया है कि राज्य सरकार ने केन्द्रीय सरकार की इस नीति के अनुसरण में कार्य किया था कि चीनी का वितरण सहकारी सोसाइटियों की मार्फत कराया जाना चाहिए। किन्तु फिर भी वह आदेश प्राधिकृत था। आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 के अधीन राज्य सरकार ने अनुज्ञप्तिधारी व्यवहारियों की मार्फत चीनी के वितरण के लिए आदेश जारी किया था और प्रत्यर्थियों ने उसके निमित्त अनुज्ञप्तियां अभिप्राप्त की थीं। उनकी अनुज्ञप्तियां शुगर डीलर्स लाइसेंसिंग आर्डर (चीनी व्यवहारी अनुज्ञापन आदेश) के खण्ड 7 द्वारा विहित प्रक्रिया के अनुसार जांच करने के बाद

ही रद्द की जा सकती थीं। प्रत्यर्थी केन्द्र सरकार द्वारा जारी किए गए चीनी नियंत्रण आदेश के अर्थान्तर्गत मान्यताप्राप्त व्यवहारी थे। प्रत्यर्थियों के अधिकार ऐसी रीति में जो कि कानूनी आदेशों के उपबन्धों के स्पष्टतः प्रतिकूल हो, किसी कार्यपालक आदेश द्वारा छीने नहीं जा सकते।

8. यह सच है कि संविधान के अनुच्छेद 352 के अधीन राष्ट्रपति ने 26 अक्तूबर, 1962 को आपातकालीन स्थिति घोषित की थी। अनुच्छेद 358 द्वारा जब कि आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में थी, तो अनुच्छेद 19 की किसी बात से राज्य की कोई ऐसी विधि बनाने की अथवा कोई ऐसी कार्यपालक कार्यवाही करने की भाग 3 में यथापरिभाषित शक्ति जिसे वह राज्य उस भाग में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अभाव में बनाने अथवा करने के लिए सक्षम होता, निर्बन्धित नहीं होगी। अनुच्छेद 359 द्वारा, जहां कि आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, वहां राष्ट्रपति यह घोषित करने के लिए प्राधिकृत है कि भाग 3 द्वारा दिए गए ऐसे अधिकारों में से समस्त को जैसे कि उस आदेश में वर्णित हों, प्रवर्तित कराने के लिए ऐसी कालावधि के लिए जिसके दौरान उद्घोषणा लागू रहती है, या ऐसी छोटी कालावधि के लिए जैसी कि आदेश में उल्लिखित की जाए, निलम्बित रहेगी।

9. आपात की उद्घोषणा कर दिए जाने पर राज्य, आपात की अस्तित्वावधि के लिए, इस बात के होते हुए भी कि वह संविधान के अनुच्छेद 19 द्वारा प्रत्याभूत स्वतन्त्रताओं का हनन करता है विधान अधिनियमित करने के लिए सक्षम है। राज्य भी ऐसी कार्यपालक कार्यवाही करने के लिए सक्षम है जिसे राज्य संविधान के अनुच्छेद 19 में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अभाव में कर सकता है। इस मामले में आक्षेपित आदेश उस समय जारी किया गया था, जब कि आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में थी। प्रत्यर्थी राज्य विधानमण्डल द्वारा अधिनियमित किसी भी विधि की विधिमान्यता को, तब तक जब तक कि आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में थी, इस आधार पर चुनौती नहीं दे सकते थे कि उससे अनुच्छेद 19 द्वारा प्रत्याभूत स्वतन्त्रताओं का हनन होता है। वे किसी ऐसी कार्यपालक कार्यवाही को भी चुनौती नहीं दे सकते थे, जो अनुच्छेद 19 में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अभाव में राज्य करने के लिए सक्षम होता।

10. राज्य ने प्रत्यर्थियों के कारबार चलाने सम्बन्धी उस मूल अधिकार का जो कि अनुच्छेद 19(1)(छ) द्वारा प्रत्याभूत है, हनन करते हुए कोई विधान नहीं अधिनियमित किया था। उसने केवल कार्यपालक आदेश जारी किया था। किन्तु कार्यपालक आदेश जिसको चुनौती नहीं दी जा सकती है, केवल वही आदेश

होता है जिसे राज्य, अनुच्छेद 19 में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अभाव में बनाने के लिए सक्षम होता। राज्य सरकार की ऐसी कार्यपालक कार्यवाही जो कि अन्यथा अविधिमान्य है, मात्र इसलिए चुनौती दिए जाने से निर्मुक्त नहीं हो सकती, क्योंकि आपातकालीन उद्घोषणा उस समय प्रवर्तन में है जब कि वह कार्यवाही की गई है। क्योंकि राज्य सरकार का आदेश आन्ध्र प्रदेश शुगर डीलर्स लाइसेंसिंग आर्डर (आन्ध्र प्रदेश चीनी व्यवहारी अनुज्ञापन आदेश और चीनी नियंत्रण आदेश) में अन्तर्विष्ट कानूनी उपबन्धों की स्पष्टतः प्रतिकूल था, इसलिए उसे अनुच्छेद 358 के अधीन संरक्षा प्राप्त नहीं थी।

11. और न ही उसे अनुच्छेद 359 के अधीन ही संरक्षा प्राप्त थी। 3 नवम्बर, 1962 को राष्ट्रपति ने अनुच्छेद 359 के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए यह आदेश जारी किया था कि "संविधान के अनुच्छेद 14, अनुच्छेद 21 और अनुच्छेद 22 द्वारा प्रदत्त अधिकार के प्रवर्तन के लिए किसी न्यायालय के समक्ष समावेदन प्रस्तुत करने सम्बन्धी किसी व्यक्ति का अधिकार उस कालावधि के लिए उस दशा में निलम्बित रहेगा जिसके दौरान 26 अक्तूबर, 1962 को संविधान के अनुच्छेद 352 के खण्ड (1) के अधीन जारी की गई आपात् की उद्घोषणा लागू रहती है, यदि ऐसे व्यक्ति को डिफेंस आफ इंण्डिया आर्डीनेंस (भारत रक्षा अध्यादेश), 1962 (1962 का 4) या तद्धीन बनाए गए किसी नियम या आदेश के अधीन किन्हीं ऐसे अधिकारों से वंचित किया गया है"। यदि आक्षेपित आदेश के बारे में यह दर्शित किया गया हो कि वह भारत रक्षा अध्यादेश या तद्धीन बनाए गए नियमों द्वारा आरक्षित प्राधिकार के अधीन जारी किया गया है केवल तभी अनुच्छेद 14 के अधीन दी गई गारन्टी के हनन से सम्बन्धित पिटीशन को ग्रहण करने सम्बन्धी अधिकारिता को अपवर्जित किया जा सकेगा। किन्तु इस कार्यवाही के बारे में यह दर्शित नहीं किया गया था कि वह भारत रक्षा अध्यादेश के अधीन या तद्धीन बनाए गए नियम या आदेश के अधीन की गई थी।

12. पुनः यह बात बताई जा सकती है कि अनुच्छेद 301 के अधीन भारत के राज्यक्षेत्र में सर्वत्र व्यापार, वाणिज्य और समागम निर्बाध होगा। वह स्वतंत्रता व्यापक शब्दों में घोषित की गई है और वह सभी प्रकार के व्यापार, वाणिज्य और समागम को लागू होती है। किन्तु यदि किन्हीं ऐसे निबन्धनों के अध्यधीन है जिनमें से अनुच्छेद 304 और 305 सुसंगत हैं। अनुच्छेद 304 में यह उपबन्ध किया गया है—

> "अनुच्छेद 301 या अनुच्छेद 303 में किसी बात के होते हुए भी राज्य का विधानमण्डल, विधि द्वारा,

(क) ....

(ख) उस साज्य के राथ या भीतर व्यापार, वाणिज्य और समागम की स्वतन्त्रता पर ऐसे युक्तियुक्त निर्बन्धन आरोपित कर सकेगा जैसे कि लोक-हित में अपेक्षित हों :

परन्तु खण्ड (ख) के प्रयोजनों के लिए कोई विधेयक या संशोधन राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना राज्य के विधानमंडल में पुन:स्थापित या प्रस्तावित नहीं किया जाएगा।"

अनुच्छेद 305 द्वारा यह भी उपबन्धित है कि ऐसी वर्तमान विधि या विधियां जिसे राज्य, राज्य, के एकाधिकारों के लिए उपबन्ध करते हुए बनाए अर्थात् जो कि ऐसे मामले से सम्बन्धित हों जो अनुच्छेद 19 के खण्ड (6) के उपखण्ड (ii) में निर्दिष्ट है, अनुच्छेद 301 की गारण्टी के बाहर हैं वर्तमान मामले में राज्य ने चीनी में व्यापार करने के सम्बन्ध में एकाधिकार नहीं अपनाया है। उसने सेण्ट्रल कन्ज्यूमर्स कोआपरेटिव स्टोर्स को जो कि अनुच्छेद 19(6)(ii) के अर्थान्तिर्गत राज्य के स्वामित्व में या राज्य द्वारा नियंत्रित निगम नहीं था, एकाधिकार अनुदत्त किया था। आदेश को इस आधार पर चुनौती दी गई कि वह संविधान के अनुच्छेद 301 द्वारा प्रत्याभूत व्यापार और वाणिज्य के स्वातंत्र्य का अतिक्रमण करता है। अनुच्छेद 304 द्वारा, राज्य के भीतर व्यापार, वाणिज्य और समागम की स्वतन्त्रता पर विधानमण्डल द्वारा निर्बन्धन केवल तभी अधिरोपित किया जा सकता है यदि ऐसे निर्बन्धन युक्तियुक्त हैं और लोक हित में अपेक्षित हैं और कोई विधेयक या संशोधन राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना राज्य के विधानमण्डल में पुर:स्थापति या प्रस्तावित नहीं किया जाएगा। स्पष्टत: अनुच्छेद 301 के अधीन जो गारण्टी दी गई है, उसे कार्यपालक कार्यवाही द्वारा छीना नहीं जा सकता है। अनुच्छेद 31 के अधीन वाली वह गारण्टी जो कि संसद् या राज्य विधानमण्डल की विधायी शक्ति पर निर्बन्धन अधिरोपित करती है, और स्वतंत्रता की घोषणा, ये दोनों ही बातें मात्र अमूर्त घोषणा नहीं हैं। यह समझने के लिए कोई भी कारण नहीं है कि जब कि विधायी शक्ति पर निर्बन्धन अधिरोपित किया गया था, उस समय संविधान के आदेश अमूर्त स्वतन्त्रता की गारण्टी दी गई थी, न कि वादियों को ही। संविधान का अनुच्छेद 301 कॉमनवैल्थ आफ आस्ट्रेलिया कान्स्टीट्यूशन ऐक्ट, 63 और 64, 1900 के विक्टोरिया चैप्टर 12 की धारा 92 में से लगभग शब्दश: उद्धृत किया गया था, इस दलील पर विचार करते हुए कि कॉमनवैल्थ आफ आस्ट्रेलिया कान्स्टीट्यूशन ऐक्ट की धारा 92 द्वारा प्रत्याभूत कोई भी वैयक्तिक अधिकार प्रत्याभूत नहीं किया गया था, ज्यूडिशियल कमेटी ने

कॉमनवैल्थ ऑफ आस्ट्रेलिया बनाम **बैंक ऑफ न्यू साउथ वेल्थ**[1] वाले मामले के पृष्ठ 305 पर यह मत व्यक्त किया गया था कि—

> "इन विनिश्चयों [जेम्स **बनाम** कोवान—(1932) ए० सी० 542 जेम्स **बनाम** कामनवैल्थ आफ आस्ट्रेलिया—(1936) ए० सी० 578] की आवश्यक विवक्षाएं महत्वपूर्ण हैं। पहला विनिश्चय यह था जिसमें इस अपील के आधार पर यह दलील दी गई थी कि कान्स्टीट्यूशन की धारा 92 के अधीन व्यक्तियों की स्वतन्त्रता की गारण्टी नहीं दी गई है। फिर भी जेम्स एक व्यक्ति था और जेम्स ने कठिनाई से प्राप्त इस स्वतन्त्रता की लड़ाई में अपना योगदान दिया था। स्पष्टतः यहां पर कुछ ग़लतफहमी है। यह सच है, जैसा कि उच्च न्यायालय ने कई बार कहा है कि धारा 92 कोई भी न्यायिक अधिकार सृष्ट नहीं करती। बल्कि वह यथास्थिति स्टेट या कॉमनवैल्थ के नागरिक को ऐसी विधि या कार्यपालक कार्यवाही की जो कि इस धारा का अतिक्रमण करती है, उपेक्षा करने का तथा उसका प्रतिवाद करने के लिए उसकी सहायता करने सम्बन्धी न्यायिक शक्ति की सहायता लेने का अधिकार तो देती ही है और यह ठीक वही बात है जो कि जेम्स ने सफलतापूर्वक की थी।"

हमारी संविधान सभा ने आस्ट्रेलिया के संविधान के व्यापार, वाणिज्य और समागम की स्वतन्त्रता का विचार लिया था। यह सच है कि गारन्टी के विस्तार पर जो परिसीमाएं अधिरोपित की गई है वे आस्ट्रेलिया के संविधान की धारा 92 में इस प्रकार से व्यक्त नहीं की गई हैं जिस प्रकार से वे हमारे संविधान में उपबन्धित है। पुनः आस्ट्रेलिया के संविधान में व्यापार चलाने सम्बन्धी मूल अधिकार की गारण्टी नहीं दी गई है। आस्ट्रेलिया के संविधान की इस युक्ति से हटने की बात के कारण इस गारण्टी के वास्तविक स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं होता है और यह अनुमान नहीं निकाला जा सकता कि संविधान ने विधायी शक्ति पर निर्बन्धन अधिरोपित किया था, किन्तु ऐसे व्यक्तियों से जो कि कार्यपालक शक्ति के अप्राधिकृत रूप से धारण किए जाने के कारण प्रभावित होते हैं, उस शक्ति के प्रयोग को चुनौती देने का अधिकार नहीं छीना है। किसी भी शक्तिशाली सांविधानिक उपबन्ध का अर्थान्वयन इस प्रकार नहीं किया जा सकता है जिससे कि घोषित गारण्टी और विधानमण्डल की शक्ति पर सांविधानिक निर्बन्धन उपहासास्पद हो जाएं। यदि राज्य विधानमण्डल की शक्ति उस रीति में निर्बन्धित की गई है जो कि अनुच्छेद 301 द्वारा उपबन्धित है किन्तु अनुच्छेद 303 से लेकर

[1] एल० आर० 1950 ए० सी० 235.

305 द्वारा उपबन्धित सीमाओं के भीतर एक तो यह अभिनिर्धारित करना असंभव होगा कि राज्य कार्यपालक आदेश द्वारा वह बात कर सकता है जो कि वह विधान द्वारा करने के लिए सक्षम नहीं है।

13. इस मामले को देखते हुए इन अपीलों को अवश्य ही निष्फल होना चाहिए और वे खारिज की जाती हैं। इस मामले में केवल एक प्रत्यर्थी हाजिर हुआ है, किन्तु उसने भी मामले का कथन फाइल नहीं किया है। इन परिस्थितियों में खर्चे के सम्बन्ध में कोई भी आदेश नहीं दिया जाता।

अपीलें खारिज की गईं।

श्री०